संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
अंक : १६८
दिसम्बर ०६
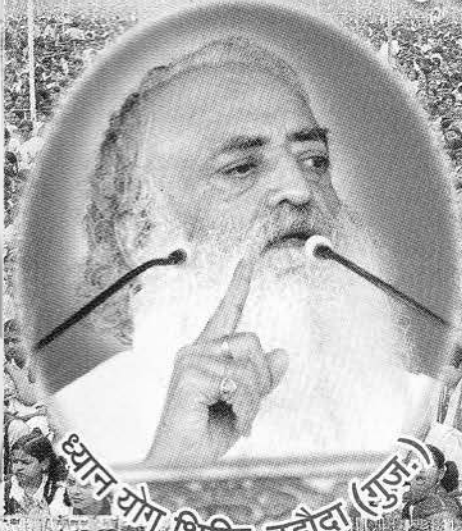
ध्यान योग शिविर, बड़ौदा (गुज.)
२ से ५ नवम्बर
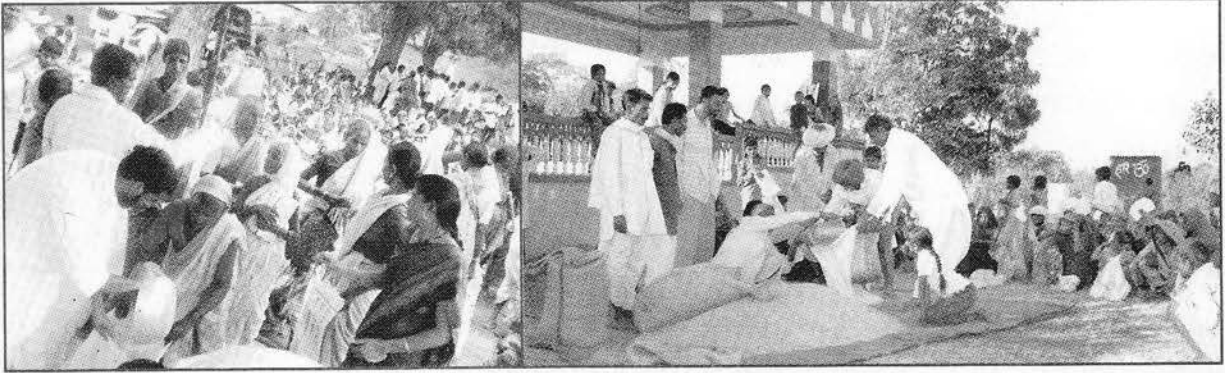
नागपुर (महा.) व डेहरी जि. धार (म.प्र.) के गरीबों-आदिवासियों में अनाज-वितरण।

नासिक व भांडुप (प.), मुंबई (महा.) में निकाली गयी संकीर्तन यात्राएँ।
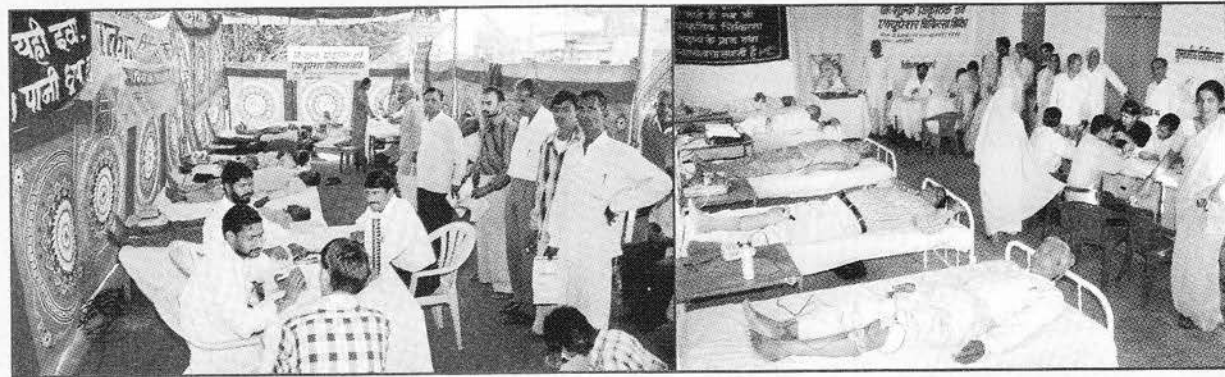
डूँगरपुर (राज.) व सलूंबर जि. उदयपुर (राज.) में निःशुल्क 'प्राकृतिक चिकित्सा शिविर' का आयोजन।
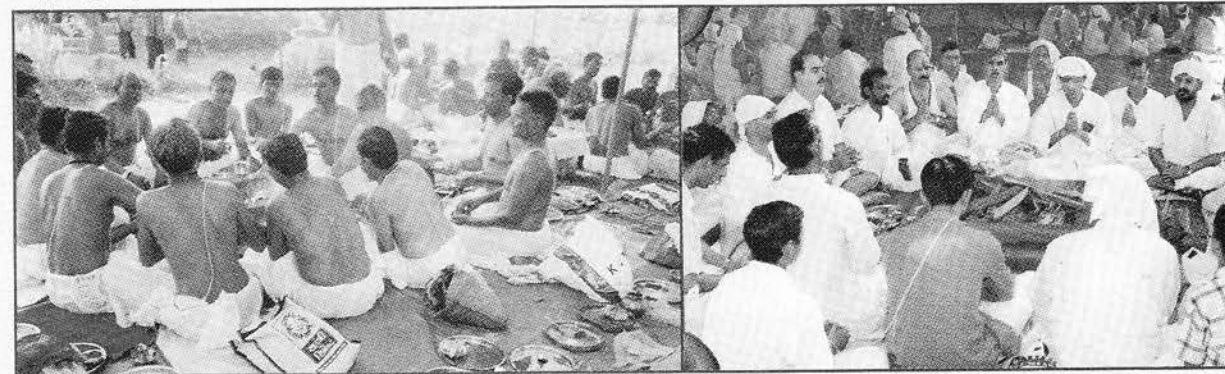
मोटी बांडीबार जि. दाहोद (गुज.) व जम्मू (जम्मू-कश्मीर) में विश्वशांति के लिए सामूहिक हवनयज्ञ।

वर्ष : १७ अंक : १६८ दिसम्बर २००६ मार्गशीर्ष-पौष वि.सं. २०६३ मूल्य : रु. ६/-

ऋषि प्रसाद

इस अंक में

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : दिव्य भास्कर, भास्कर हाऊस, मकरबा, सरखेज-गाँधीनगर हाईवे, अहमदाबाद - ३८००५१
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US$20	US$80

कार्यालय : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

पाँच गुरुचाबियाँ

मैं भगवान की जाति का हूँ ।

भगवान के साथ मेरा शाश्वत संबंध है ।

भगवान मेरे अपने हैं ।

भगवान से मैं भगवान को ही चाहता हूँ।

सब भगवान का है ।

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

भगवान की भक्ति में जल्दी आगे बढ़ना हो, भक्ति को सफल बनाना हो और पाप-ताप, दुःखों व नीच योनियों के चक्र से सदा के लिए छूटकर इसी जीवन में परमात्मा के पते पर पूरा पहुँचना हो तो पाँच बातें आज अपने हृदयपटल पर लिख लो । आपके जीवन में दुःखों का अंत और परमात्मसुख की प्राप्ति करानेवाली ये पाँच गुरुचाबियाँ हैं :-

१. मैं भगवान की जाति का हूँ ।

मैं शरीर की बीमारी को, तन्दुरुस्ती को, बाल्यकाल को, जवानी को, सुख को, दुःख को जानता हूँ । मैं ज्ञानस्वरूप आत्मा हूँ । जैसे परमात्मा सारी सृष्टि को जानते हैं, ऐसे ही मैं आत्मा अपने तन को जानता हूँ । इसलिए मैं भगवान की जाति का हूँ।

शरीर और संसार की जाति एक है। आत्मा और परमात्मा की जाति एक है । शरीर जड़ है लेकिन मैं चैतन्य हूँ, शरीर मरनेवाला है पर मैं मौत के बाद भी रहनेवाला हूँ।

२. भगवान के साथ मेरा शाश्वत संबंध है ।

शरीर के साथ मेरा शाश्वत संबंध नहीं है । बचपन में प्रभु के साथ मेरा जो संबंध था वह अभी भी है लेकिन बचपन में सखा और सखियों के साथ जो संबंध था वह अभी वैसा नहीं है । तो भगवान के साथ मेरा नित्य संबंध है और सखा-सखियों के साथ कल्पित संबंध है । यह सच्ची बात मानने में कौन तुमको ना बोलता है ?

भगवान के साथ हमारा नित्य संबंध है, बिल्कुल पक्की बात है। बचपन के साथ नित्य संबंध होता तो बचपन जाता नहीं, जवानी के साथ नित्य संबंध होता तो जवानी जाती नहीं, बुढ़ापा के साथ नित्य संबंध होता तो बुढ़ापा छोड़ के मरते नहीं। ये सब अनित्य संबंध हैं लेकिन आत्मा-परमात्मा के साथ मेरा नित्य संबंध था, है और रहेगा ।

यह मानने में आपको क्या जोर पड़ता है ? इसमें क्या समस्या आती है ? क्या ठगी हो रही है ? बिल्कुल सच्ची बात है! यह भगवान का पता है और भगवान साक्षी हैं।

३. भगवान मेरे अपने हैं ।

मकान तो कोई हड़प सकता है, गहने पति-पत्नी छीन सकते हैं, हिसाब हिस्सेदार दबा सकता है लेकिन मेरा आत्मा-परमात्मा तो मरने के बाद भी मेरा साथ नहीं छोड़ेगा।

अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं सन्निहितो मृत्युः...

रोज मृत्यु के निकट जा रहे हैं। शेयर बाजार चाहे टाइट हो जाय चाहे ढीला हो जाय किंतु शेयर बाजार का

धन्धा करनेवाला तो रोज मौत की तरफ जा रहा है । पक्की बात है । शेयर बेचनेवाला भी मौत की तरफ जा रहा है, लेनेवाला भी मौत की तरफ जा रहा है और शेयरों का गणित लगानेवाला भी मौत की तरफ जा रहा है परंतु मेरा आत्मा-परमात्मा का संबंध कभी मौत की तरफ नहीं जा सकता। अकाल पुरुष के साथ मेरा अयोनिज संबंध है। काल का भी काल है मेरा आत्मदेव!

एक अनादि अनंत छुं रे,
मारो आवे नहिं अंत...

मैं एक, अनादि, अनन्त आत्मा हूँ। मेरा अंत नहीं आता।

भगवान नित्य हैं और मेरा आत्मा-मैं भी नित्य हूँ। शरीर पहले नहीं था और मरने के बाद नहीं रहेगा परंतु मैं रहूँगा । मैं बड़ौदा का हूँ, मैं रतलाम का हूँ यह सब शरीर को मैं मानने की बेवकूफी से होता है। वास्तव में हम भगवान के हैं, भगवान हमारे हैं ।

४. भगवान से मेरे को कोई नश्वर चीज नहीं चाहिए, भगवान से तो मैं भगवान को ही चाहता हूँ।

यह चौथी बात बहुत हितकर है। बड़ी तेजी से भगवान के साथ मिलायेगी ।

५. सब भगवान का है ।

वासुदेवः सर्वं... सब भगवान हैं, सर्वत्र भगवान हैं, सब भगवान का है। 'यह हमारा, यह हमारा... यह बेटा हमारा, यह बेटी हमारी, गाड़ी हमारी...' ऐसा ऊपर-ऊपर से कहो पर अंदर से समझो कि भगवान हमारे हैं, बाकी सब सपना है ।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ।
सत हरिभजनु जगत सब सपना॥

शरणागति से शांति और सामर्थ्य

अगर शांति चाहिए तो वैराग्य और तत्त्वज्ञान का सहारा लो; शांति मिलेगी, परम शांति मिलेगी, जिसके आगे विश्व का राज्य, इन्द्र का राज्य भी छोटा है । अगर सामर्थ्य चाहिए तो इन्द्रिय-संयम करके योग करो, उपासना करो, धारणा-ध्यान-समाधि करो । लेकिन अपना 'मैं' ईश्वर को अर्पित कर दिया जाय तो शांति और सामर्थ्य स्वाभाविक आ जाता है । और इन बाह्य ईश्वरों के श्रीविग्रहों की आवश्यकता तब तक रहती है, जब तक तत्त्ववेत्ता गुरु से मुलाकात नहीं हुई । जब तत्त्ववेत्ता गुरु मिल जाते हैं और उनमें श्रद्धा हो जाती है तो फिर वह ईश्वर भी बहुत दूर नहीं दिखता है, वह ईश्वर अपना-आपा दिखता है । अपने-आपमें अगर नहीं दिखता है तो गुरु में तो जरूर दिखता है और गुरु में जब दिखा तो गुरु के सिद्धांतों में, गुरु के अनुभवों में, गुरु के ज्ञान में अपने मन की वृत्ति लगा देने से साधक के जीवन में शांति और सामर्थ्य आना शुरू हो जाता है । इस प्रकार शांति और सामर्थ्य भगवद् शरणागति से आ जाता है ।

समर्थ सद्गुरु के विषय में स्वामी शिवानंदजी 'गुरुभक्तियोग' में लिखते हैं :

'ब्रह्म-विषयक ज्ञान अति सूक्ष्म है । शंकाएँ पैदा होती हैं, उनको दूर करने के लिए एवं मार्ग दिखाने के लिए ब्रह्मज्ञानी आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता रहती है । ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु आपके लिए 'इलेक्ट्रिक लिफ्ट' हैं । वे आपको पूर्णता के शिखर पर पहुँचायेंगे ।

अपने सद्गुरु को, आध्यात्मिक आचार्य को खोज लो, जो आपको अनन्त तत्त्व अथवा शाश्वत चेतन प्रवाह के साथ एकत्व साधने में सहाय कर सकें । अपने गुरु की इच्छा की शरण हो जाओ । गुरु आपके उद्धारक एवं संरक्षक हैं । सदैव उनकी पूजा करो, उनका आदर करो । उनको आत्मसमर्पण करो, तभी आपका उद्धार होगा । आत्मसाक्षात्कारी महापुरुष का सान्निध्य बहुत उन्नतिकारक होता है । यदि आप सन्निष्ठ एवं उत्सुक होंगे, यदि मोक्ष के लिए तीव्र आकांक्षा होगी, यदि अपने गुरु की सूचनाओं का चुस्तता से पालन करेंगे, यदि आप अखण्ड और निरंतर योग करेंगे तो आप छः महीने में सर्वोच्च लक्ष्य सिद्ध कर सकेंगे । ऐसा ही होगा, यह मेरा वचन है ।'

साधना दिग्दर्शन

एकाग्रता के पेट में भगवद्ज्ञान भर दो

एक ही जगह पर मन को लगाना, यह एकाग्र होना है । बोलते हैं : **तपःसु सर्वेषु एकाग्रता परं तपः ।** 'तपस्याओं में एकाग्रता परम तपस्या है ।' एकाग्रता का धन संसारी धन से कई गुना ज्यादा मूल्यवान है । एकाग्रता का धन जिसके पास है उसके आगे राजा-महाराजा, देव, यक्ष, गंधर्व, किन्नर यहाँ तक कि ब्रह्माजी भी प्रकट हो जाते हैं । एकाग्रता बड़ा धन है और सभी लोग एकाग्रता का धन कमा सकते हैं ।

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा ।

(पातंजल योगदर्शन : ३.१)

एक देश में चित्त को लगाना, उसको बोलते हैं - 'धारणा' । फिर ध्यान होता है । जैसे आप कमरे या हॉल में बैठे हैं तो कमरे या हॉल की वस्तुओं के सिवा मन कहीं न जाय । पहले उतने में ही उसको बाँधो, कोई दूसरा चिंतन न करो । मन अगर भटकता है तो इतने में ही भटकाओ। यह अभ्यास हो गया तो उस कमरे या हॉल की एक चीज में ही मन को लगा दो । उसमें भी भगवान का चित्र हो, गुरु का चित्र हो, स्वस्तिक हो तो उत्तम है । उसकी ओर एकटक नजर लगा दो । इससे एकाग्रता आती है । एकाग्रता से ऐहिक सफलताएँ भी मिलती हैं और आध्यात्मिक, धार्मिक लाभ भी होते हैं लेकिन परम लाभ एकाग्रता से नहीं होता है ।

ऐसे तो कई गायकों का मन भी एकाग्र हो जाता है, कुछ क्षणों तक कवियों, कारीगरों का भी एकाग्र हो जाता है और बड़े-बड़े तपस्वियों का मन लम्बे समय तक, कई दिनों तक एकाग्र रहता है । परंतु उसके साथ सावधानी नहीं रही तो वह एकाग्रता भी जन्म-मरण से पार नहीं कर सकती ।

जैसे हिरण्यकशिपु का मन एकाग्र हुआ । ब्रह्माजी आ गये, वरदान माँगने को कहा । 'ऊपर न मरूँ, नीचे न मरूँ, ऐसे न मरूँ, वैसे न मरूँ...'- सारे वरदान मिले । सुवर्ण का हिरण्यपुर बनाया । रावण ने एकाग्र मन से तप किया । एकाग्रता हुई, शिवजी से वरदान पाया । फिर भी रावण को परमात्मप्राप्तिरूपी परम लाभ नहीं हुआ । अब रावण की लंका दिखती नहीं है और हिरण्यकशिपु का हिरण्यपुर भी नहीं दिखता है । एकाग्रता के साथ ध्यान में यह सावधानी हो कि मन वासना से रहित बने, विक्षेप से रहित बने । दुःखों से और अज्ञान से रहित बनानेवाली एकाग्रता हो ! अज्ञान से ही सारे दुःख होते हैं और अज्ञान से ही वासना होती है ।

मन से लड़ो मत । मन को एकाग्र करोगे तो भाग जायेगा । फिर भी हारो मत, निराश मत होओ । लड़ो मत, भिड़ो मत । मन में अच्छे संस्कार भरते जाओ । 'भगवान, गुरुजी अपने हैं, निजी हैं, साक्षी हैं, चैतन्यस्वरूप हैं, सुखस्वरूप हैं...'- इसी प्रकार का चिंतन करते-करते ध्यान होना चाहिए । एकाग्रता के पेट में भगवान होने चाहिए, भगवान का ज्ञान होना चाहिए, भगवान का प्रेम होना चाहिए । भगवान ने कहा है :

विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ।

'एकान्त और शुद्ध देश में रहने का स्वभाव और विषयासक्त मनुष्यों के समुदाय में प्रेम का न होना- (यह ज्ञान है) ।'

(गीता : १३.१०)

लोगों के सम्पर्क में रहोगे, टी.वी. रहेगा तो फिर एकाग्रता नहीं होगी बेटे ! समाचार पत्र पढ़ते रहोगे, मोबाईल भी साथ में रखोगे तो एकाग्रता नहीं होगी । इसलिए कुछ समय इन चीजों से अपनेको उपराम करके अभ्यास करो । नहीं तो 'इतनी देर तो इन चीजों से दूर रहेंगे' ऐसा दृढ़ संकल्प करके अभ्यास करो । एकाग्रता के पेट में भगवान का ज्ञान नहीं होगा तो एकाग्रता में मजा नहीं आयेगा । थोड़ा रस आया- न आया, फिर मन में जो कुछ चाहोगे, वह हो गया तो उन्हीं चीजों में फँस जाओगे । भगवान हो के पूजे जाओगे लेकिन कितने दिन ? समझो आखिर तक भी पूजे गये फिर क्या हुआ ? भगवान के स्वरूप को तो नहीं जाना न ! एकाग्र हो के भगवान की सत्ता-सामर्थ्य लाये और उसको संसार में खर्च कर दिया । हिरण्यकशिपु की एकाग्रता के सामने आपकी एकाग्रता क्या है ? रावण की एकाग्रता के सामने आपकी एकाग्रता कितनी होगी ? साठ-साठ हजार वर्ष आयुष्यवालों के आगे आपका क्या आयुष्य ? इसीलिए सुंदर सत्संग है, सलाह है कि एकाग्रता के साथ-साथ भगवद्ज्ञान, भगवत्प्रेम, भगवत्प्राप्ति का उद्देश्य बना लो । अंतर्यामी परमेश्वर ज्ञानस्वरूप हैं, आपका भगवत्प्राप्ति का उद्देश्य बनते ही वे आपके उद्देश्य को पोषण देंगे ।

जिनको परमात्मप्राप्ति हुई है उनका अनुभव शास्त्रों से लेकर 'श्रीनारायण स्तुति' (आश्रम से प्रकाशित पुस्तक) बनी है । एकाग्रता के साथ उन भगवान के स्वरूप का अनुसंधान करने से भगवद्विश्रांति-भगवद्प्राप्ति सहज में हो जायेगी ।

– पूज्यश्री

क्या हालचाल है ?

(सत्संग-प्रवचन से)

विषयों की आसक्ति, जगत में सत्यबुद्धि यह बंधन का कारण है और विषयों में वैराग्यवृत्ति व परमात्मा में सत्यबुद्धि यह मुक्ति का कारण है ।

पहले के जमाने के लोग आपस में मिलते थे तो पूछते थे : 'क्या हालचाल है ? आपका चित्त अपने मूल कारण में तो है न ? आपका मन आत्मचिंतन में तो है न ? आपका मन परमात्म-चिंतन में, स्वरूप के चिंतन में तो है न ? आपकी तपस्या ठीक तो चलती है न ? आप 'स्व'स्थ तो हो न ? ('स्व' माना आत्मा, उसमें तो स्थित हो न ?)'

फिर जमाने ने करवट ली, आदमी कुछ नीचे गिरा, पूछने लगा : 'धंधा-पानी कैसा है ? राजकाज कैसा चलता है ?'

फिर आदमी और नीचे आया - अति क्षुद्र वस्तुओं में । पहले सतयुग था, फिर त्रेता-द्वापर आये, अब कलियुग आ गया । अब आदमी पूछता है : 'कैसी है तबीयत ?' माना हाड़-मांस, वात-पित्त-कफ, थूक ठीक माप के हैं कि कम-ज्यादा हो गये हैं ?

कोई पूछे : 'कैसी है तबीयत ?' तो कहना : 'यह तो श्मशान की ओर जा रही है, आपकी-हमारी-सबकी ।' हर रोज आपका स्थूल शरीर श्मशान की तरफ जा रहा है । कल जितना आयुष्य था, उतना आज नहीं है ।

पड़ा रहेगा माल खजाना,
छोड़ त्रिया सुत जाना है ।
कर सत्संग अभी से प्यारे !
नहीं तो फिर पछताना है ॥
खिला-पिला के देह बढ़ायी,
वह भी अग्नि में जलाना है ।
कर सत्संग अभी से प्यारे !
नहीं तो फिर पछताना है ॥

बुद्धि को किसमें लगायें ?

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

सुखी सुखी हम सब कहें, सुखमय जानत नाही।
सुख स्वरूप आतम अमर, जो जाने सुख पाही॥

प्रत्येक मनुष्य स्थिर सुख चाहता है, शाश्वत सुख चाहता है, पूर्ण सुख चाहता है लेकिन वह मिले कैसे ? इस पर कोई विचार नहीं करता।

कोई संत आशीर्वाद दे दें कि 'तुम एक वर्ष तक सुखी रहो' तो तुरंत ही विचार आयेगा कि दूसरे वर्ष क्या ? संत यदि ऐसा आशीर्वाद दे दें कि 'जब तक जीयो तब तक सुखी रहो, बाद में नरक में पड़ो' तो यह भी अच्छा नहीं लगेगा क्योंकि मरने के बाद भी नरक नहीं चाहते।

पूर्ण सुख मिले यह प्राणिमात्र की इच्छा है फिर सुख मिलता क्यों नहीं ? इसलिए कि हम अपूर्ण संसार के क्रियाकलापों में अटक गये हैं, अपूर्ण संसार के अल्प ज्ञान को ही पूर्ण मानते हैं। 'मुझे यह बनाना आता है... मुझे ऐसा करना आता है...' इस अल्प ज्ञान में ही धन्यता का अनुभव करते हैं परंतु जिसकी सत्ता से विचार उठते हैं, जिसकी सत्ता से सब क्रियाकलाप होते हैं वह परमात्मा ही पूर्ण है, बाकी सब अपूर्ण है। जब तक उस पूर्ण परमात्मा को पहचाना नहीं, उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान पाया नहीं, तब तक पूर्ण सुख नहीं मिल सकता।

भगवत्प्राप्ति में बड़े-में-बड़ा विघ्न है, बड़े-में-बड़ी बाधा है शरीर को 'मैं' और संसार को 'मेरा' मानने की मूर्खता। यह जीव को भटकानेवाली बड़ी मूर्खता है। वास्तव में परमात्मा मेरा है और मैं आत्मा हूँ। संसार की वस्तु वास्तव में अपनी होती तो मरने के बाद अपने साथ चलती और शरीर अपन होते तो मरने के बाद शरीर को साथ में ले जाते।

उस परमात्मा की प्राप्ति, अपने आत्मा की जागृति नहीं हो तो इसकी तड़प होनी चाहिए। संसार में जब मजा आ रहा है न तो फिर वह तड़प मरी हुई है। आफत आ जाय अथवा विवेक जगे तो काम बन जाय। मुसीबत आ जाय, विघ्न-बाधा आ जाय तो संसार फीका लगेगा और भगवान मीठे लगेंगे या अपना पुण्य बढ़ जाय, विवेक बढ़ जाय कि संसार फीका है, दुःखदायी है, धोखे से भरा है। अंत में तो

दुनिया के जो मजे हैं हरगिज कम न होंगे।
चर्चे यहीं रहेंगे अफसोस हम न होंगे॥

राजा भोज एक जौहरी पर बहुत खुश हुए। उस जौहरी के सम्मान हेतु समारोह रखा गया। राजा ने मंत्री को आदेश दिया कि मैं इस पर बहुत खुश हूँ। तुम इसको थाल भरकर हीरे देना चाहो तो हीरे दे सकते हो, जवाहरात देना चाहो तो जवाहरात दे सकते हो, दो-पाँच रियासतें देना चाहो तो रियासतें दे सकते हो। इसने अस्सी साल की उम्र में हीरे के विषय में मुझे जो सिखाया है, ऐसा कोई जौहरी नहीं सिखा सकता। मेरे राज्य में इसकी बराबरी का कोई जौहरी नहीं है। इस प्रकार राजा ने उसकी खूब प्रशंसा की।

मंत्री ने अनुरोध किया कि राजा स्वयं यथोचित इनाम दें पर राजा ने आज्ञा दी कि मंत्री ही इनाम दे तो मंत्री ने कहा : ''राजन्! आप जो हुकुम करें वह मैं दे दूँ।''
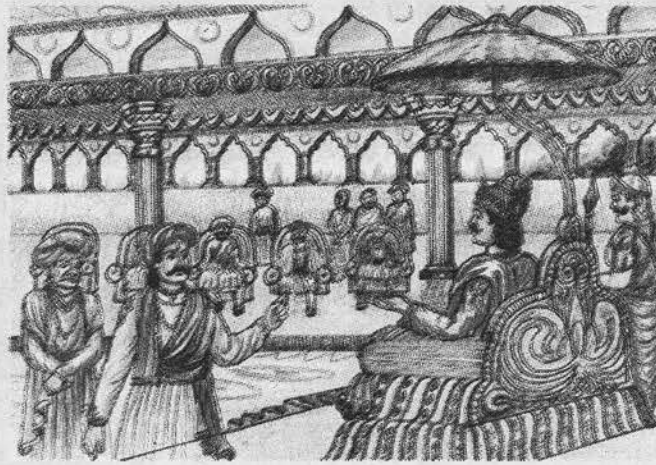
राजा बोला : ''नहीं, तू बड़ा बुद्धिमान है। तू जो भी करेगा उचित करेगा। तू जो भी देना चाहे दे दे। मेरी तरफ से आधा राज्य देने की भी तू घोषणा करता है तो भी मैं स्वीकार कर लूँगा।''

मंत्री ने कहा : ''मैं इस जौहरी का सम्मान करने के बदले इसको बढ़िया इनाम देना चाहता हूँ।''

''हाँ-हाँ, कह दो।''

''राजन् ! मुझे तो यही इनाम उचित लगता है कि जौहरी की चमकीली टाल पर सात जूते मारे जायें।''

मंत्री की बात सुनकर सभा में सन्नाटा छा गया। राजा भोज थोड़े चिढ़-से गये कि 'खजाना मेरा है, तुझे देने में ईर्ष्या तो नहीं होनी चाहिए। तू तो राग-द्वेष और पक्षपात से रहित प्रभावशाली बुद्धि का धनी है। तू ऐसा क्यों बोलता है ?'

मंत्री बोला : ''महाराज ! एक तो मनुष्य-जन्म मिलना ही दुर्लभ है, उसमें इतनी तीक्ष्ण बुद्धि मिलना तो और दुर्लभ है और इसने उस तीक्ष्ण बुद्धि को पत्थर परखने में ही लगा दिया ! यह पत्थर परखने की विद्या क्या इसे जन्म-मरण से छुड़ायेगी ?

अब अस्सी साल का है, साल में मरे, दो-पाँच साल में मरे... मरेगा तो फिर जन्म लेने के लिए गर्भ में आयेगा। गर्भ मिला-न-मिला नाली में बहेगा। जिस बुद्धि का उपयोग बुद्धिदाता को जानने में करना चाहिए था, बुद्धिदाता में विश्रांति पाने में करना चाहिए था उस बुद्धि को किसी पत्थर की निंदा, किसीकी सराहना अथवा मरनेवाले शरीर को सजाने में या उसका नाम करने में नष्ट कर दिया !''

बुद्धिमान जौहरी ने भी अपनी गलती स्वीकार की :

''धनभाग है कि मेरा सम्मान समारोह किसी तत्त्वचिंतक महापुरुष के सत्‌शिष्य की हाजिरी में हुआ है। धिक्कार है मुझे ! मैंने पेटपालू कुत्ते की नाईं हीरे के पत्थर परखने में ही जिंदगी खर्च कर दी। जो भोग व मोक्ष दोनों दिलाये ऐसे सत्यस्वरूप आत्मा को पहचानने में जो मति लगानी चाहिए उसे मैंने दुःखद संसार के पीछे खर्च कर दिया। वे धनभागी हैं जो संत-सान्निध्य पाते हैं एवं अपने आत्मा को पाने में अपनी मति लगाते हैं।''

मंत्री : ''अब इनको जूते न मारें, राज्य देना चाहो तो भी मना नहीं है।''

राजा ने मंत्री की बुद्धि व सूझबूझ की खूब सराहना की। अपना बड़प्पन संसारी बड़प्पन है, मिटनेवाला बड़प्पन है। अपना वास्तविक बड़प्पन तो परमात्मा को जानने में है। बड़ा जौहरी बन गया तो क्या, बड़ा नेता बन गया तो क्या, बड़ा महंत-सेठ बन गया तो क्या, बड़े-में-बड़े परमात्मा में अपने 'मैं' को मिटा दें वे धनभागी हैं।

दुनिया के अल्प ज्ञान और अल्प सुख के पीछे जीवन नष्ट करने के बदले उस सुखस्वरूप आत्मा को पहचानने का यत्न करना चाहिए, जिससे पूर्ण ज्ञान और पूर्ण सुख प्राप्त होता है।

यावत् भूमा तत् सुखम्।

*

यह कैसी शिक्षा ?

उज्जैन (म.प्र.) के 'कार्मेल कॉन्वेंट स्कूल' की दूसरी कक्षा के प्रश्नपत्र में 'औलाद' शब्द का उपयोग करके एक वाक्य बनाया गया : 'राम की औलाद शैतान है।'

उज्जैनवासियों को इस बारे में पता चला तो वे स्तब्ध रह गये। कई संगठनों ने स्कूल के संचालक का घेराव किया व पुलिस में शिकायत भी दर्ज करायी। परिणामतः स्कूल के संचालक फादर हेन्स और सिस्टर नीला को लिखित माफी माँगनी पड़ी।

कॉन्वेंट और मिशनरी शिक्षण संस्थाएँ आये दिन सनातन संस्कृति के देवी-देवताओं को अपमानित करने के षड्यंत्र रचती ही रहती हैं। ऐसे स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ने के लिए भेजनेवाले अभिभावकों के लिए यह गंभीर और चिंतनीय विषय है। इन स्कूलों में बच्चों को अपनी ही संस्कृति व धर्म के प्रति विरोधी पाठ पढ़ाया जाता है।
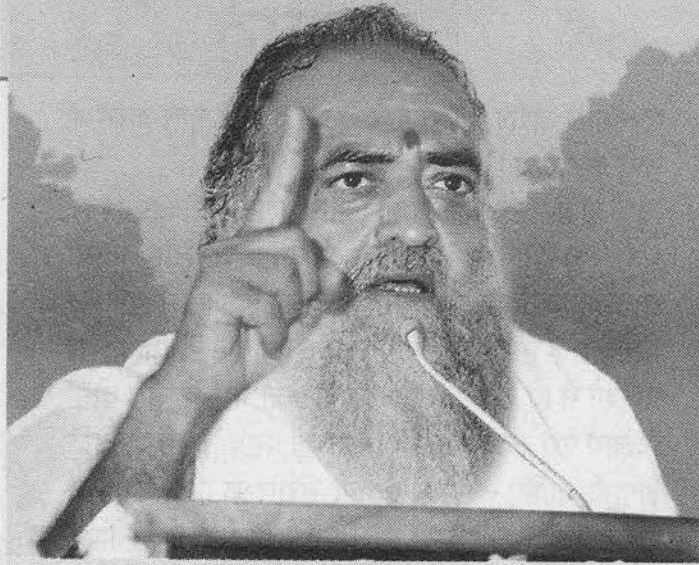
आत्मयोग

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

हे मानव ! तू अपनी महिमा में जाग जा । दुनिया तेरे साथ अन्याय करे, तेरा अपमान करे, तुझे दुःख दे, तेरा मजाक उड़ाये तो तू उसको ठीक करने में मत लग । तू अपने स्वरूप में, अपने-आपमें ठीक तरह से आ जा । फिर प्रकृति उसकी बुद्धि को बदल देगी अथवा उसका विनाश हो जायेगा ।

मित्रों को राजी करने में, शत्रुओं को ठीक करने में अपना समय मत गँवा । परमात्मा जो कि तेरा परम मित्र है, उसमें जाग जा । ब्रह्मानंद की मदिरा पीकर मस्त हो जा । आत्मानन्द के नशे से जीवन को सराबोर कर दे । अहंकार तेरा परम शत्रु है, उसको पीठ दे दे, उससे मुँह मोड़ ले । बस, इतना ही तेरा कर्तव्य है और सब स्वतः ठीक हो जायेगा । ॐ... ॐ... ॐ....

स्वप्नसृष्टि अपनी कल्पनारूप है, निद्रादोष से भिन्न भासती है । उसमें राग-द्वेष उपजता है किंतु जागने पर सब क्षोभ मिट जाते हैं । उसी प्रकार अज्ञान से जगत सत्य लगता है, उसमें राग-द्वेष भासते हैं परंतु ज्ञान होने पर सब शांत हो जाते हैं ।

ज्ञान और सच्ची शिक्षा सब-के-सब भीतर से निकलते हैं, पुस्तकों तथा बाहरी मस्तिष्कों से नहीं । इसलिए हे भोले महेश ! भीतर गोता मार । अपने-आपमें आ । व्यवहार करते समय अपने-आपसे पूछा करो : 'मैं कौन हूँ ? आखिर यह तिकड़मबाजी कब तक चलाता रहूँगा ?'

कान बहरे हो जायें, आँखें निस्तेज हो जायें, शरीर जीर्ण-शीर्ण हो जाय, कुटुम्बी और मित्र मुँह मोड़ने लग जायें उसके पहले तू अपना असली मुँह देख ले; अपना मित्र देख ले । देर क्यों करता है भैया ? लोगों को रिझाने में क्यों पड़ा है ? हिम्मत कर ! साहस कर ! मार छलाँग ! मंजिल दूर नहीं है । ॐ... ॐ... ॐ...

बीते हुए व्यवहार और जीवन को स्वप्नतुल्य समझो । जो बीत रहा है वह भी तो स्वप्न है, जो बीतेगा वह भी स्वप्न, इन सबको देखनेवाला अपना स्वरूप है ।

अपने-आपको शरीर और उसके अड़ोस-पड़ोस से ऊपर उठाओ । मन और उसकी इच्छाओं से, संसार और उसकी सम्मतियों से तुम ऊपर स्थित रहो ।

भावना करो : 'सूर्यों का सूर्य मैं हूँ । बुरे विचारों और सांसारिक इच्छाओं को मेरे सन्मुख आने का अधिकार नहीं है । बड़े-से-बड़ा भी मैं हूँ एवं नीच-से-नीच भी मैं हूँ ।'

अपने प्रति सच्चे और निर्मल बनो । अपने अनुभव के अनुसार जीवन बनाओ । अपने अनुभव से अधिक प्रवीण और कोई शिक्षक संसार में नहीं है । तुम्हारा अनुभव है कि अपने-आपको तुम छोड़ नहीं सकते और संसार को रख नहीं सकते । प्रतिदिन संसार के हर पदार्थ को, प्रिय-में-प्रिय व्यक्ति को, विषयों को छोड़ते हो तभी

नींद करते हो। जाग्रत, स्वप्न और नींद - तीनों आते-जाते हैं लेकिन उनका अनुभव करनेवाले तुम इन तीनों में एक-के-एक ! तुम अपने-आपको छोड़ नहीं सकते और जगत को सतत रख नहीं सकते। यह तुम्हारा अनुभव है। अतः अपने अनुभव के खजाने को पा लो ।

चारों ओर, अनन्त भविष्य में, सम्पूर्ण देश में केवल एक ही परमात्मा का अस्तित्व है । फिर डर किसका हो ? बुखार आने पर मैं विकल नहीं होता । मित्रवत् उसका स्वागत करता हूँ । उस समय ऐसे आध्यात्मिक तत्त्व चमक उठते हैं जो अन्यथा कभी प्रकट नहीं हो सकते थे । हरेक दशा स्वास्थ्यरूप है ।

जिस तरह मछलियाँ जलराशि में ही रहती हैं उसी तरह तुम आत्मप्रकाश निधि में ही रहो, आत्मप्रकाश में ही चलो-फिरो, अपना अस्तित्व आत्मप्रकाश में ही रखो । सारा विश्व मुझमें समाया हुआ है । सारी दुनिया मैं हूँ, सब मेरा ही रुधिर-मांस है अथवा सब वासुदेव है । जिस पूर्णता में पहुँचना है उसीके स्वभाव में, उसीकी स्मृति में, उसी निष्ठा में लगे रहो।

भगवान की दृष्टि में जो दुर्लभ है वह पा लो ।

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ।

(गीता : ७.१९)

अपना निरीक्षण ही वास्तविक सत्संग, स्वाध्याय और अध्ययन है । शागिर्द हैं तो हम हैं, उस्ताद हैं तो हम हैं । हमारे स्वरूप की एकता में कभी अन्तर नहीं आ सकता । सागर में लाखों तरंगें होने दो, इससे सागर की एकता में अन्तर नहीं आ सकता ।

कोई भी बड़े-से-बड़ा सम्राट यहाँ तक कि ३३ करोड़ देवों का सम्राट इन्द्र अथवा इन्द्रपद भी जिनके आगे नन्हा हो जाता है ऐसे ब्रह्मज्ञानी संत, जिनकी दृष्टि अमृतवर्षी, जिनका दर्शन बड़भागी पाये, ऐसे महान-से-महान अनुभव के धनी हों, वे मेरे ही आत्मस्वरूप हैं। वे मेरे ही आत्मा हैं । यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश में भी यही भावना करो। वे ब्रह्मज्ञानी संतों को अपना ही आत्मा मानते हैं । अपनेको उन्हींका आत्मज मानते हैं । सचमुच तुम वही हो।

निर्भयता से प्रसन्नचित्त होकर सत्य के सागर में प्रवेश करो । डरते और घबराते क्यों हो ? अविश्वास और धोखे से भरा हुआ संसार वास्तविक सदाचारी, सत्यनिष्ठ साधक का कुछ भी बुरा नहीं कर सकता । दुःख का ख्याल करनेवाला दुःखों और कष्टों को अपने ऊपर लाता है । सबके शुभचिन्तक का सब शुभ हो जाता है । अगर सूर्य मेरी दायीं तथा चाँद मेरी बायीं ओर आकर धमकाने लगे कि पीछे हट जाओ, तब भी मैं पीछे नहीं हटूँगा। मैं अपने शुद्ध लक्ष्य को पाकर ही रहूँगा।

मैं छुई मुई का पौधा नहीं, जो छूने से मुरझा जाता है ।
मैं वो माई का लाल नहीं, जो हौवा से डर जाता है ॥

ईश्वर की नाईं प्रत्येक शक्ति, प्रत्येक परमाणु, प्रत्येक तारे और वृक्ष पर अपना स्वत्व क्यों स्थापित नहीं करते ? यही वेदांत है ।

मुझे नितान्त स्मरण नहीं कि मैं कभी पैदा हुआ था । निस्सन्देह मैं कभी पैदा नहीं हुआ था और संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो मुझे निश्चय करा सके कि मैं कभी मर सकता हूँ । मैं मरना और जीना दोनों को देखनेवाला हूँ । सुख और दुःख मुझ द्रष्टा से ही गुजरते हैं । हजारों शरीरों की मौत होने पर भी मैं कभी नहीं मरा, कभी नहीं जन्मा । मैं चिदाकाशस्वरूप हूँ । ॐ... ॐ...

जो इस सत्य को, इस अनुभव को अपना अनुभव बनाते हैं, उनके दर्शन करके यक्ष, गंधर्व, किन्नर और देव भी अपना भाग्य बनाते हैं । हे मानव ! अपनेको देह मानने की गलती छोड़। अपनी असलियत में जाग जा। तेरे बाप का क्या बिगड़ता है ?

जो समग्र संसार से अपनेको अभिन्न अनुभव करता है, उसके साथ काम करने के लिए समग्र संसार बाध्य होता है । **वासुदेवः सर्वमिति...** का अद्भुत प्रभाव - सब तुम्हीं, सबकी गहराई में वही तुम्हारा चेतन है।

संत चरित्र

ज्ञाननिष्ठ श्री गणेशानन्द 'अवधूत'

एकादशी, संक्रान्ति एवं ग्रहण आदि पर्वों पर मैं अपने पितामह के साथ गंगा-स्नान के लिए जाता था। गंगाजी मेरे गाँव से दो-तीन मील दूर हैं । वहाँ एक टेकरी पर वटवृक्ष था । उसकी छाया में शिवलिंग की स्थापना की हुई थी। वहाँ से बहुत दूर-दूर तक गंगाजी एवं गंगा पुलिन के दर्शन होते थे। पलाश का जंगल भी उत्तम कोटि का था। मेरे पितामह स्नान के अनन्तर मुझे वहीं बैठा देते व स्वयं संध्या-वंदन, जप एवं पाठ करते । गायत्री-जप में उनकी श्रद्धा थी । मैं जब वट-छाया में बैठा होता, एक सुन्दर, स्वस्थ एवं युवा पुरुष भगवती भागीरथी में श्रद्धापूर्वक अवगाहन करके शंकरजी को जल चढ़ाया करते थे । वे पितामह के चरणस्पर्श करते । मेरे लिए बोलते :

'पाय लागी महाराज !' शिवताण्डव-स्तोत्र का पाठ करते । उनका नाम था 'श्री गणेश प्रसाद रस्तोगी ।' पहचान हो गयी, बार-बार मिलना होने लगा। मैं जब 'लघु कौमुदी' पढ़ने के लिए धानापुर जाने लगा तो उनकी कपड़ों की दुकान पर भी जाता। गणेशजी दुकान पर बैठकर 'ज्ञान-वैराग्य प्रकाश', 'दृष्टान्त-प्रकाश' या हिन्दी-'पंचदशी' पढ़ते होते और मुझसे कहते कि आप पढ़कर सुनाइये। मैं उन्हें देर-देर तक पढ़कर सुनाया करता। इस प्रकार युवावस्था में ही उनके चित्त में वेदांत के संस्कार भरे हुए थे।

वे तीन भाई थे - गौरीशंकर, रामनाथ एवं गणेशजी। उनकी कपड़े की दुकान अच्छी चलती थी। बनी हुई भी सबसे ऊँची और सुन्दर थी। हमारे पितामह कभी-कभी कपड़ा खरीदने के लिए उनकी दुकान पर जाया करते। अब तो याद आने पर आश्चर्य होता है कि उन्हें बता दिया जाता अमुक-अमुक कपड़ा चाहिए। वे उसे बाँधकर रख देते और कागज पर कीमत लिख देते। मेरे पितामह उसे उसी समय अथवा बाद में चुका दिया करते। मोल-भाव की बात कभी होती ही नहीं थी । व्यापारी और ग्राहक का वह सौजन्य और ईमानदारी अब कहाँ देखने को मिलती है ! इसी प्रसंग में एक बात और याद आती है - इन्हींके पड़ोस में एक मुसलमान सज्जन, पीर मुहम्मद खाँ की जूतों की दुकान थी । मैं बालक ही था । जूता पसन्द किया, पहन लिया । उन्होंने तीन रुपया दाम बताया, मैंने दे दिया । इसके बाद उन्होंने अपने-आप आठ आना वापस किया। मैंने पूछा : ''क्यों ?''

वे बोले : ''मैंने सोचा था तुम मोल-भाव करोगे तो आठ आना छोड़ दूँगा। मोल-भाव न करने पर मैं बेईमानी करके आठ आना अधिक कैसे लेता !'' यह अबसे ६२-६३ वर्ष पहले की बात है । व्यापारी और ग्राहक के चित्त का निदर्शन है । गणेशप्रसाद के भाई गौरीशंकर की भी ऐसी ही मनोवृत्ति थी ।

दुकान पर बैठकर वेदान्त-ग्रन्थों का स्वाध्याय करते-करते गणेशजी के मन में वैराग्य उदय हुआ । माता थी, पत्नी थी, पुत्र थे, अच्छा व्यापार था । कोई कमी नहीं थी परंतु उनको वह सब नहीं भाता था। गंगातट पर चले जाते, देर-देर तक नहीं लौटते । शंकरजी से प्रार्थना करते : 'हे प्रभो ! हमारे चित्त को कामवासना से मुक्त कर दो । आप काम के शत्रु हो, आपकी दृष्टि पड़ते ही काम भस्म हो जाता है । एक बार मेरे चित्त पर ऐसी दृष्टि डालिये ।' जब उन्हें वैराग्य का आवेश होता, घर-बार छोड़कर चले जाया करते थे ।

उन्हीं दिनों में चित्रकूट की पीली कोठी में उन्होंने स्वामीजी अखण्डानंदजी महाराज (अन्य थे) के दर्शन किये । वे उच्चकोटि के विलक्षण महात्मा थे ।

'शिवोऽहम्-शिवोऽहम्' के अतिरिक्त कोई दूसरी बात उनके पास थी ही नहीं । वे जप, तप, पूजा का उपदेश नहीं करते थे। सीधी चोट करते थे : 'परमानन्द-स्वरूप तू, नहिं तुझमें दुःख लेश - तुम परमानन्दस्वरूप हो, तुममें लेशमात्र भी दुःख नहीं है । तुम दुःखी नहीं हो, दुःख के द्रष्टा हो । तुम अज्ञानी नहीं हो, अज्ञानी के साक्षी हो । तुम्हारा जन्म-मरण नहीं है । तुम अजर, अमर, अजन्मा हो ।'- यही उपदेश वे किया करते थे। उनकी शिष्य-मण्डली बहुत बड़ी थी । गाँव-गाँव में घूम-घूमकर **'शिवोऽहम्'** का डंका बजाया करते थे। गणेशजी को दृढ़ निश्चय हो गया कि यही 'सत्य-सिद्धान्त' है । सब श्रुतियों, मतियों, गतियों का सार यही है ।

बुद्धि में निश्चय हो जाने पर भी वैराग्य टिकता नहीं था। कई बार घर से जाते। कषाय वस्त्र भी धारण कर लेते परंतु कुछ दिनों बाद लौटकर आ जाया करते। हमारी सत्संग-गोष्ठी भी जमने लगी थी । वे कभी-कभी आया करते। मेरी माताजी को 'बुआजी' कहा करते थे क्योंकि वे उन्हींके गाँव धानापुर की लड़की थीं और गणेशजी की माताजी के साथ उनका बहुत प्रेम था । सत्संग का रंग चढ़ने लगा। कभी-कभी उनको मन में पश्चात्ताप होता, व्याकुल होते, 'हाय ! हाय ! संसार के विषय-भोगों में, मोह-ममता के चक्कर में, मैं ऐसा फँस गया हूँ कि निकल नहीं पाता।' कभी रोते तो कभी दहाड़ने लगते :

'शिवोऽहम् - शिवोऽहम् !' दोनों ही वृत्तियाँ बारी-बारी से प्रबल हो जाया करतीं । जप, उपासना छूट गयी थी । चित्त के लिए कोई अवलम्बन नहीं था । उन दिनों उन्हें यही दुःख था कि चित्त-वृत्ति आत्मा में टिकती नहीं है, वैराग्य दृढ़ होता नहीं है परंतु सत्य तो यही है कि आत्मा ब्रह्म है। इसका साक्षात्कार, अपरोक्ष अनुभव होना ही चाहिए।

वे मेरे घर पर आते। कभी-कभी दिन-दिन भर रह जाते। 'गीता-भागवत' सुनते । जब भाई सुदर्शन सिंह 'चक्र' भगवान श्रीकृष्ण की लीला सुनकर बेसुध हो जाते - अश्रुपात, रोमांच, विवर्णता से शरीर आक्रान्त हो जाता, तब मेरी माताजी तो बहुत आनन्दित होतीं परंतु गणेशजी हँसा करते थे और दो-चार घण्टे के बाद जब चक्रजी होश में आते तब वे उनका उपहास करने लगते। वे मूर्तिपूजा, लीला आदि को बालकों का खेल कहा करते थे । चक्रजी भी कभी-कभी कह बैठते : 'जैसे तुम **शिवोऽहम्-शिवोऽहम्** बोलते हो, वैसे गर्दभोऽहम्-गर्दभोऽहम् क्यों नहीं बोलते !' उनकी विशेषता यह थी कि वे कभी किसी भी घटना से अपना अपमान नहीं मानते थे।

गणेशजी के मन में वैराग्य का अंकुर था । कभी-कभी उसमें पल्लव, पुष्प भी लगते थे परंतु फलित होने से पहले ही मनोवृत्ति बदल जाया करती थी । वैराग्य में स्थाई भाव होना आवश्यक है । इसीसे शांत रस की अनुभूति होती है परंतु स्थाई भाव बनने में उन्हें पुनः-पुनः विफलता ही हाथ लगती ।

एक दिन की बात है, सूर्यास्त के समय मैं गंगातट पर बैठा था। सूर्य की रक्त-रश्मियों से क्षितिज भी रक्ताभ हो गया था। प्रकृति शांत थी। गंगाजी प्रकृति के समान मन्द-मन्थर गति से बह रही थीं और मैं तटस्थ, कूटस्थ भाव से पास ही बैठा हुआ था। गणेशजी फफक-फफक के रोने लगे । वे कहने लगे, 'परिवारिक मोह मुझे बहुत दुःख दे रहा है । मैं छोड़ना चाहता हूँ, छोड़ता भी हूँ, कभी-कभी चला भी जाता हूँ परंतु लौटकर फिर आ जाता हूँ। मुझे कोई ऐसी युक्ति बतलाइये कि हमेशा के लिए मैं इस बंधन से छूट जाऊँ ।'

मैंने उन्हें एक युक्ति बतलायी । वह युक्ति नयी नहीं थी। 'विष्णुपुराण' में लिखी हुई है : 'साधक को चाहिए कि सत्पुरुषों के आचरण की निन्दा तो न करे परंतु कुछ इस ढंग का आचरण करे कि लोग उसका अपमान करें और उसके साथ रहना पसंद न करें ।' गणेशजी के मन में यह बात बैठ गयी ।

(क्रमशः)

- स्वामी श्री अखण्डानंदजी सरस्वती

सात बातें जीवन में लाने से चमत्कारिक परिवर्तन आ जायेगा

शांत बैठना

प्रार्थना

जप

ध्यान

प्राणायाम

मौन

दृढ़ संकल्प

जन्म मिला और चला गया, सृष्टि बनी और मिट गयी फिर भी जो नहीं मिटता वह अपना आपा है । उसका साक्षात्कार करने के लिए साधक को अपने में सात बातें लानी पड़ेंगी :

(१) ब्राह्ममुहूर्त में उठना और शांत बैठना : सूर्योदय से सवा दो घंटे पहले ब्राह्ममुहूर्त चालू होता है । एक-डेढ़ घंटा भी पहले उठे तो आप ब्राह्ममुहूर्त में उठ गये । उठते ही कुछ न करें, शांत बैठ जायें । 'जो सुख को, दुःख को, जीवन को, मृत्यु को जाननेवाला आत्मदेव है, मैं उस सत्-चित्-आनंद स्वरूप के माधुर्य में शांत हो रहा हूँ । यह मायाविशिष्ट तन मेरा नहीं लेकिन माया और माया के खेल मुझ चैतन्य से प्रकाशित होते हैं । वह चैतन्य मैं हूँ, **सोऽहम्** ।' इस ब्रह्मभाव में कुछ समय बैठे रहें । भगवान श्रीकृष्ण भी नींद में से उठकर कुछ समय शांत बैठते थे । हम भी शांत बैठते हैं, बहुत लाभ होता है ।

दिन भर करने से जो मिलेगा वह नश्वर मिलेगा, छूट जानेवाला, दुःख देनेवाला मिलेगा या तो जरा-सा, मिटनेवाला, हलका, फुटकर सुख मिलेगा किंतु उठने के बाद कुछ न करने से सुख और दुःख को बौना करके परमात्मा से मिलानेवाला पद (परमात्म-पद) मिलेगा ।

दिन में की आरती-पूजा से लाभ होता है पर इसका लाभ कई गुना ज्यादा होता है । काशी व मक्का जाना सबके वश की बात नहीं है । सुबह नींद में से उठकर कुछ समय शांत हो जाओ तो हजार बार काशी और मक्का जाने के बाद भी मिले-न-मिले उस परमात्मा से आप मिल सकते हो ।

(२) प्रार्थना : रोज प्रार्थना करें कि 'हे परमेश्वर ! हे गुरुदेव ! हे इष्टदेव ! मेरा हृदय पवित्र हो, पवित्र भाव और पवित्र ज्ञान का विकास हो । सबमें जो एक सत्ता बसी है, वह साक्षी, चैतन्य, सत्स्वरूप है ।

आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

उस सत्स्वरूप में हमारी स्थिति हो जाय । असत् शरीर में, असत् सुख-दुःख में स्थिति होने से हम कई बार जन्मे और मरे । अब हम सत् में स्थित हो जायें ।' न साबुन से हृदय पवित्र होगा न पानी से, प्रार्थना से हृदय पवित्र होगा ।

(३) प्रणव का दीर्घ जप : सुबह गुरुमूर्ति को, इष्टमूर्ति को देखते हुए प्रणव का दीर्घ जप करें । ॐकार सिद्धियों, जीव और ईश्वर के बीच एक सुन्दर सेतु है । प्रणव का दीर्घ जप एकाग्रता की कुंजी है । एकाग्रता शक्ति का संचय करती है । 'ॐ' बीजमंत्र भोग, मोक्ष, आरोग्य, आयुष्य और साफल्य देनेवाला है । साथ ही यह शांति, आत्मबल और सूझबूझ का विकास भी करता है । आज से ही शुरू कर दो । आज ही दिन भर में आपको उसकी

सात बातें जीवन में लाने से चमत्कारिक परिवर्तन आ जायेगा

शांत बैठना

प्रार्थना

जप

ध्यान

प्राणायाम

मौन

दृढ़ संकल्प

जन्म मिला और चला गया, सृष्टि बनी और मिट गयी फिर भी जो नहीं मिटता वह अपना आपा है । उसका साक्षात्कार करने के लिए साधक को अपने में सात बातें लानी पड़ेंगी :

(१) ब्राह्ममुहूर्त में उठना और शांत बैठना : सूर्योदय से सवा दो घंटे पहले ब्राह्ममुहूर्त चालू होता है । एक-डेढ़ घंटा भी पहले उठे तो आप ब्राह्ममुहूर्त में उठ गये । उठते ही कुछ न करें, शांत बैठ जायें । 'जो सुख को, दुःख को, जीवन को, मृत्यु को जाननेवाला आत्मदेव है, मैं उस सत्-चित्-आनंद स्वरूप के माधुर्य में शांत हो रहा हूँ । यह मायाविशिष्ट तन मेरा नहीं लेकिन माया और माया के खेल मुझ चैतन्य से प्रकाशित होते हैं । वह चैतन्य मैं हूँ, **सोऽहम्** ।' इस ब्रह्मभाव में कुछ समय बैठे रहें । भगवान श्रीकृष्ण भी नींद में से उठकर कुछ समय शांत बैठते थे । हम भी शांत बैठते हैं, बहुत लाभ होता है ।

दिन भर करने से जो मिलेगा वह नश्वर मिलेगा, छूट जानेवाला, दुःख देनेवाला मिलेगा या तो जरा-सा, मिटनेवाला, हलका, फुटकर सुख मिलेगा किंतु उठने के बाद कुछ न करने से सुख और दुःख को बौना करके परमात्मा से मिलानेवाला पद (परमात्म-पद) मिलेगा ।

दिन में की आरती-पूजा से लाभ होता है पर इसका लाभ कई गुना ज्यादा होता है । काशी व मक्का जाना सबके वश की बात नहीं है । सुबह नींद में से उठकर कुछ समय शांत हो जाओ तो हजार बार काशी और मक्का जाने के बाद भी मिले-न-मिले उस परमात्मा से आप मिल सकते हो ।

(२) प्रार्थना : रोज प्रार्थना करें कि 'हे परमेश्वर ! हे गुरुदेव ! हे इष्टदेव ! मेरा हृदय पवित्र हो, पवित्र भाव और पवित्र ज्ञान का विकास हो । सबमें जो एक सत्ता बसी है, वह साक्षी, चैतन्य, सत्स्वरूप है ।

आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

उस सत्स्वरूप में हमारी स्थिति हो जाय । असत् शरीर में, असत् सुख-दुःख में स्थिति होने से हम कई बार जन्मे और मरे । अब हम सत् में स्थित हो जायें ।' न साबुन से हृदय पवित्र होगा न पानी से, प्रार्थना से हृदय पवित्र होगा ।

(३) प्रणव का दीर्घ जप : सुबह गुरुमूर्ति को, इष्टमूर्ति को देखते हुए प्रणव का दीर्घ जप करें । ॐकार सिद्धियों, जीव और ईश्वर के बीच एक सुन्दर सेतु है । प्रणव का दीर्घ जप एकाग्रता की कुंजी है । एकाग्रता शक्ति का संचय करती है । 'ॐ' बीजमंत्र भोग, मोक्ष, आरोग्य, आयुष्य और साफल्य देनेवाला है । साथ ही यह शांति, आत्मबल और सूझबूझ का विकास भी करता है । आज से ही शुरू कर दो । आज ही दिन भर में आपको उसकी

अपने अपराध को तुरंत स्वीकार कर लेना उन्नति के मार्ग में आगे बढ़ने का प्रथम सोपान है ।

सुंदरता का, उसकी महानता का थोड़ा-सा अनुभव होगा, कल थोड़ा ज्यादा होगा । दस-बीस दिन के बाद तो आपके शरीर के कणों और मन में काफी परिवर्तन हो जायेगा ।

(४) ध्यान : सुबह ध्यान में समय गुजारना चाहिए । ध्यान के समान कोई तीर्थ नहीं, कोई यज्ञ नहीं, कोई तप नहीं, कोई दान नहीं, कोई स्नान नहीं । कर्म के बीच-बीच में भी एक-दो मिनट ध्यान करने से आपके कर्मों में चार चाँद लगेंगे और आपके चित्त में भी कर्म करने का आनंद आयेगा ।

(५) प्राणायाम : प्रतिदिन प्राणायाम करने चाहिए । प्राणायाम करने से पापनाशिनी शक्ति, रोगप्रतिकारक शक्ति, अनुमान शक्ति, क्षमा शक्ति व शौर्य शक्ति विकसित होती है तथा स्मरण शक्ति आदि बढ़ती है । जो प्राणायाम परायण हैं, ऐसे निष्पाप साधक के हृदय में आत्मप्रकाश होता है ।

श्वास लेकर रोकें एवं भगवन्नाम-जप करें तो सौ गुना प्रभाव होगा । भगवन्नाम सहितवाले प्राणायाम थोड़े ही दिनों में आपको प्रसन्नचित्त, मधुमय, मधुर स्वभाव और सद्भाव संपन्न कर सकते हैं ।

(६) मौन : मौन रखने का अभ्यास करें । मौन से आंतरिक शक्तियों का विकास होता है । मनोबल व बुद्धिबल बढ़ता है ।

संभोग करने से शरीर का जो सार तत्त्व नष्ट होता है, बोलने से भी वही सार तत्त्व खर्च होता है । जैसे - दीये का तेल ढुल गया तो घाटा हुआ और दीये में जला तभी भी खर्च तो होता है । ऐसे ही संभोग से मानों वीर्यरूपी तेल ढुल जाता है और बोलने से मानों वह खर्च हो रहा है । बोलने से शरीर की मज्जा, ओज और जीवनीशक्ति ये तीनों खर्च होते हैं । इसलिए सारगर्भित वाणी बोलें, दस शब्दों की जगह पर छः में निपटा लें । रोज कम-से-कम तीन घंटे मौन रखने का अभ्यास करें ।

(७) अपने दोषों को दूर करने का दृढ़ संकल्प करें : साधन करने से सद्भाव तथा बहुत सारी सिद्धियाँ आती हैं लेकिन अपने जीवन में कुछ-न-कुछ दोष होते हैं, इसलिए परम सिद्धि - ब्रह्मज्ञान नहीं मिलता । अपने दोष दूर करने लिए सुबह दृढ़ संकल्प करें और उसमें लगे रहें । इसके लिए जीवन में कोई व्रत-नियम होना चाहिए, दृढ़ता होनी चाहिए ।

अपने जीवन को उन्नत करने के लिए उपर्युक्त सात महत्त्वपूर्ण कार्य अवश्य करने चाहिए । ये कार्य कोई कठिन नहीं हैं । जो आप कर सकते हैं और परम उन्नत हो सकते हैं वही कहा जा रहा है । साधक ये सात बातें अपने जीवन में लायें तो सचमुच थोड़े ही दिनों में उनके जीवन में चमत्कारिक परिवर्तन आ जायेगा । **- पूज्यश्री**

॥ हे प्रभु ! आनंददाता !!

हे प्रभु ! आनंददाता !! ज्ञान हमको दीजिये ।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिये ॥
लीजिये हमको शरण में हम सदाचारी बनें ।
ब्रह्मचारी धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बनें ॥
हे प्रभु०

निंदा किसीकी हम किसीसे भूलकर भी ना करें ।
ईर्ष्या कभी भी हम किसीसे भूलकर भी ना करें ॥
हे प्रभु०

सत्य बोलें झूठ त्यागें मेल आपस में करें ।
दिव्य जीवन हो हमारा यश तेरा गाया करें ॥
हे प्रभु०

जाये हमारी आयु हे प्रभु ! लोक के उपकार में ।
हाथ डालें हम कभी न भूलकर अपकार में ॥
हे प्रभु०

मातृभूमि मातृसेवा हो अधिक प्यारी हमें ।
देश की सेवा करें निज देश हितकारी बनें ॥
हे प्रभु०

कीजिये हम पर कृपा ऐसी हे परमात्मा !
मोह मद मत्सर रहित होवे हमारी आत्मा ॥
हे प्रभु०

प्रेम से हम गुरुजनों की नित्य ही सेवा करें ।
प्रेम से हम दुःखीजनों की नित्य ही सेवा करें ॥
हे प्रभु०

अपने अपराध को तुरंत स्वीकार कर लेना उन्नति के मार्ग में आगे बढ़ने का प्रथम सोपान है ।

सुंदरता का, उसकी महानता का थोड़ा-सा अनुभव होगा, कल थोड़ा ज्यादा होगा । दस-बीस दिन के बाद तो आपके शरीर के कणों और मन में काफी परिवर्तन हो जायेगा ।

(४) ध्यान : सुबह ध्यान में समय गुजारना चाहिए । ध्यान के समान कोई तीर्थ नहीं, कोई यज्ञ नहीं, कोई तप नहीं, कोई दान नहीं, कोई स्नान नहीं । कर्म के बीच-बीच में भी एक-दो मिनट ध्यान करने से आपके कर्मों में चार चाँद लगेंगे और आपके चित्त में भी कर्म करने का आनंद आयेगा ।

(५) प्राणायाम : प्रतिदिन प्राणायाम करने चाहिए । प्राणायाम करने से पापनाशिनी शक्ति, रोगप्रतिकारक शक्ति, अनुमान शक्ति, क्षमा शक्ति व शौर्य शक्ति विकसित होती है तथा स्मरण शक्ति आदि बढ़ती है । जो प्राणायाम परायण हैं, ऐसे निष्पाप साधक के हृदय में आत्मप्रकाश होता है ।

श्वास लेकर रोकें एवं भगवन्नाम-जप करें तो सौ गुना प्रभाव होगा । भगवन्नाम सहितवाले प्राणायाम थोड़े ही दिनों में आपको प्रसन्नचित्त, मधुमय, मधुर स्वभाव और सद्भाव संपन्न कर सकते हैं ।

(६) मौन : मौन रखने का अभ्यास करें । मौन से आंतरिक शक्तियों का विकास होता है । मनोबल व बुद्धिबल बढ़ता है ।

संभोग करने से शरीर का जो सार तत्त्व नष्ट होता है, बोलने से भी वही सार तत्त्व खर्च होता है । जैसे - दीये का तेल ढुल गया तो घाटा हुआ और दीये में जला तभी भी खर्च तो होता है । ऐसे ही संभोग से मानों वीर्यरूपी तेल ढुल जाता है और बोलने से मानों वह खर्च हो रहा है । बोलने से शरीर की मज्जा, ओज और जीवनीशक्ति ये तीनों खर्च होते हैं । इसलिए सारगर्भित वाणी बोलें, दस शब्दों की जगह पर छः में निपटा लें । रोज कम-से-कम तीन घंटे मौन रखने का अभ्यास करें ।

(७) अपने दोषों को दूर करने का दृढ़ संकल्प करें : साधन करने से सद्भाव तथा बहुत सारी सिद्धियाँ आती हैं लेकिन अपने जीवन में कुछ-न-कुछ दोष होते हैं, इसलिए परम सिद्धि - ब्रह्मज्ञान नहीं मिलता । अपने दोष दूर करने लिए सुबह दृढ़ संकल्प करें और उसमें लगे रहें । इसके लिए जीवन में कोई व्रत-नियम होना चाहिए, दृढ़ता होनी चाहिए ।

अपने जीवन को उन्नत करने के लिए उपर्युक्त सात महत्त्वपूर्ण कार्य अवश्य करने चाहिए । ये कार्य कोई कठिन नहीं हैं । जो आप कर सकते हैं और परम उन्नत हो सकते हैं वही कहा जा रहा है । साधक ये सात बातें अपने जीवन में लायें तो सचमुच थोड़े ही दिनों में उनके जीवन में चमत्कारिक परिवर्तन आ जायेगा । **– पूज्यश्री**

॥ हे प्रभु ! आनंददाता !!

हे प्रभु ! आनंददाता !! ज्ञान हमको दीजिये ।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिये ॥
लीजिये हमको शरण में हम सदाचारी बनें ।
ब्रह्मचारी धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बनें ॥
हे प्रभु०

निंदा किसीकी हम किसीसे भूलकर भी ना करें ।
ईर्ष्या कभी भी हम किसीसे भूलकर भी ना करें ॥
हे प्रभु०

सत्य बोलें झूठ त्यागें मेल आपस में करें ।
दिव्य जीवन हो हमारा यश तेरा गाया करें ॥
हे प्रभु०

जाये हमारी आयु हे प्रभु ! लोक के उपकार में ।
हाथ डालें हम कभी न भूलकर अपकार में ॥
हे प्रभु०

मातृभूमि मातृसेवा हो अधिक प्यारी हमें ।
देश की सेवा करें निज देश हितकारी बनें ॥
हे प्रभु०

कीजिये हम पर कृपा ऐसी हे परमात्मा !
मोह मद मत्सर रहित होवे हमारी आत्मा ॥
हे प्रभु०

प्रेम से हम गुरुजनों की नित्य ही सेवा करें ।
प्रेम से हम दुःखीजनों की नित्य ही सेवा करें ॥
हे प्रभु०

हे प्रभु ! तू हमारे मन को कल्याणकारी-सुखदायी मार्ग की ओर लगा ।

प्रार्थना

प्रार्थना माने अपनी जानकारी में जो सर्वोपरि वस्तु, व्यक्ति, आनंद है, उसको पाने की तीव्र इच्छा को, व्याकुलता को प्रकट करना । जिसको आप सर्वोत्तम ज्ञान, सर्वोत्तम आनंद समझते हैं वह हमारे जीवन में प्रकट हो जाय - इस आकांक्षा को वाचिक, मानसिक और शारीरिक अभिव्यक्ति देने का नाम 'प्रार्थना' है ।

प्रार्थना में चार तत्त्व होने चाहिए :

(१) अपने में दीनता का भाव होना चाहिए ।

हमारे जीवन में भगवान के अविनाशी, स्वयंप्रकाश, परमानंद स्वरूप को प्रकट होने में बाधक है - हमारा ही अभिमान और दूसरों का आश्रय । दीनता का बोध होने के बाद जो प्रार्थना की जाती है, उसमें भगवान का बल आ जाता है । जब तक अपने बल पर और अपनी प्रज्ञा पर भरोसा रहता है, तब तक भगवान के ज्ञान और शक्ति को प्रकट होने का अवसर नहीं मिलता ।

(२) जिसकी हम प्रार्थना कर रहे हैं उसके स्वरूप का, स्वभाव का, गुणों का, मृदुता का, दयालुता का बोध और विश्वास होना चाहिए । वह सर्वज्ञ है, हमारे दिल-दिमाग, हृदय की जानता है, सर्वसमर्थ है और **'कर्तुं शक्यं अन्यथा कर्तुं शक्यम्'** है - ऐसा दृढ़ विश्वास होना चाहिए ।

(३) प्रार्थना करते-करते हम 'स्व' को भूल जायें और ईश्वर ही रह जायें, वे ही रह जायें ! वाणी ही नहीं, मन भी एकदम मूक हो जाय, कुछ भी बोल न पाये ।

(४) तन्मयता में भी ऐसी तन्मयता आये की कोई वासना ही नहीं रहे, कोई विचार नहीं रहे, भावना भी न रहे ।

प्रार्थना में असीम शक्ति है । कारण कि प्रार्थना में अपने बल पर जोर न देकर भगवान के बल का आश्रय होता है । प्रार्थना के बल पर प्रह्लाद ने नारायण को, द्रौपदी ने द्वारकाधीश को, सूरदास ने श्याम को प्रकट कर दिया । प्रार्थना शाश्वत साधन है । अभी भी कोई सच्चे हृदय से परमात्मा को पुकारे, प्रार्थना करे तो भगवान प्रकट होते हैं अथवा मनोवांछित पूर्ण करते हैं । प्रार्थी में विशुद्ध प्रज्ञा, विशुद्ध ज्ञान और सत्य से एकता प्रदान करने की शक्ति भी प्रार्थना में है । फिर छोटे-मोटे भोग, यश की तो बात ही क्या है ! लेकिन सच्चा भक्त तो अपनी प्रज्ञा में भगवत्प्रकाश के लिए प्रार्थना करता है । वेदों में भी प्रार्थना का महत्त्व है । वेद के मंत्रों को उलटने का सामर्थ्य किसी में भी नहीं है । ऐसे वेदों में प्रार्थना के बहुत अधिक मंत्र हैं : **भद्रं नो अपि वातय मनः ।**

'हे प्रभु ! तू हमारे मन को कल्याणकारी-सुखदायी मार्ग की ओर लगा ।' **(ऋग्वेद : १०.२०.१)**

तो आज से ही भगवत्प्राप्ति के इस शाश्वत साधन में जुट जाओ, जो कि भाई-माई, बच्चे-बूढ़े, जवान सब कर सकते हैं और सरल भी है ।

हरि भजन परायण कर्मठी बाई

– पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

राजस्थान के बागर ग्राम में पुरुषोत्तम ब्राह्मण की इकलौती बेटी थी कर्मठी बाई । वह विवाह नहीं करना चाहती थी परंतु 'लोग क्या कहेंगे'- इस डर से माँ-बाप ने उसको धकेल दिया संसार के भोग-विलास से भरे जीवन की ओर । कुछ ही दिनों में कर्मठी बाई का शारीरिक पति चल बसा पर असली पति तो किसीका नहीं मरता है । कर्मठी बाई बाहर के जगत के हिसाब से तो विधवा हो गयी लेकिन उसका परम पति परमेश्वर तो मौजूद ही था । विश्वपति जीवित है तो वह विधवा कैसे ? उसके पुण्यों ने उसको ईश्वर के रास्ते प्रेरित किया । गुरुजी से दीक्षा ली तथा वर्षों तक जप, तप, व्रत आदि नियमों का पालन करती रही ।

काल का दुष्चक्र चला और एक-पर-एक कष्टों के पहाड़ मानों टूट पड़े कर्मठी बाई पर । माँ की मृत्यु हो गयी, पिता संसार से अलविदा हो गये, ससुर-सास मर गये । पतिपक्ष व मातृपक्ष दोनों में एक भी नहीं रहा । दुनिया की नजर से वह बिल्कुल अनाथ-सी हो गयी किंतु विश्वनाथ, विश्वेश्वर किसको किस ढंग से उन्नत करना चाहता है यह तो वही जाने ।

जिसको वो प्यार करता है, उसीको आजमाता है ।
खजाने रहमत के, इसी बहाने लुटाता है ॥

कर्मठी ने संत हरिदास का आश्रय लिया । उनके चरणों में रहकर उसने साधन-भजन किया, उनके बताये मार्ग के अनुसार हरिभक्ति की यात्रा शुरू की परंतु हरिदास महाराज का भी आश्रय छूट गया । वह वृंदावन के श्रीवन में आयी । वहाँ उसने श्रीहित हरिवंशचन्द्रजी से दीक्षा ली ।

उसकी कर्मनिष्ठा, जप-तप, भक्तियोग ने उसे इतनी तो ऊँचाई दी कि उसका बाहर का नियम-कर्म, पूजा-पाठ छूटता-सा चला गया और वह चुप, शांत... एकाकी विश्रांति पाने में सफल होने लगी । अब उसे बाह्य मंदिर के चक्कर काटने की आवश्यकता नहीं रही । बाह्य पुष्प एकत्रित करना, चंदन घिसना, तिलक लगाना, घंटी बजाना, आरती करना अब उसको रुचता नहीं था । वह बिना आरती के सारी आरतियाँ कर लेती थी, बिना चंदन के विश्वनियंता को चंदन लगा देती थी । शांत, वासनाओं से क्षीण भक्ति के समुद्र में कर्मठी बाई की आगे की यात्रा तो हुई लेकिन तप्त अग्नि की परीक्षा से भी उसे पसार होना था । विधाता की कुछ ऐसी ही लीला थी ।

स्त्री के प्यारे शत्रु हैं, निकट के शत्रु हैं उसका रूप-लावण्य, यौवन और स्त्रीत्व । कर्मठीबाई का रूप-लावण्य ऐसा कि अप्सरा, परी-सी दिखती थी । सादे-सूदे वस्त्र आदि पहनने के बाद भी विकारी दृष्टि से देखनेवाले उसके यौवन पर लट्टू हो जाते थे ।

मथुरा के राजप्रबंधक हसनबेग ने श्रीवन की सुंदरता के विषय में सुना था । एक दिन श्रीवन की शोभा देखते-देखते यमुनाजी में गोता मारकर निकली हुई रूप-लावण्य, सौन्दर्य की धनी कर्मठी भीगे कपड़ों में उस कामी की नजर में आ गयी । हसनबेग उसके सौन्दर्य पर लट्टू हो गया । उसने जाँच-पड़ताल करवायी कि यह कहाँ रहती है और इसके रिश्ते-नातेदार कौन हैं ?

सारी जानकारी मिलने पर हसनबेग को खुशी हुई कि अकेली अबला को पटाना अथवा उसको अपनी भोग्या बनाना आसान होगा । जाहिर में कुछ करें तो भक्त जगत में हल्ला-गुल्ला हो जायेगा, इसलिए वह मथुरा गया और कुछ कुलटाओं को साथ मिलाकर कर्मठी को फँसाने का कार्यक्रम बनाया व इसके लिए दो कुलटाओं को नियुक्त कर दिया गया । उन कुलटाओं ने कहा :

''हम कर्मठी से सीधे मिलेंगी तो वह हमसे बात नहीं करेगी । वह भक्तानी है इसलिए हमें भी भक्तानी के वेश
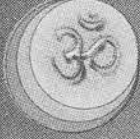
में, उसकी सत्संगी बनकर धीरे-धीरे उसको फँसाने का जाल बिछाना पड़ेगा ।''

हसनबेग उनकी चतुराई पर खुश हुआ और उन्हें धन के साथ इस सारी व्यवस्था में सहयोग करनेवाले लोग भी दे दिये ।

उन कुलटाओं द्वारा भक्तानियों का वेश धारण कर कर्मठी बाई के निकट आने का उनका प्रयास सफल हो गया । वे दोनों कर्मठी बाई की सत्संगी बन गयीं । एक दिन वे दोनों देर से आयीं । कर्मठी ने देर से आने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा :

''हम क्या कहें, हम तो सुबह-सुबह आपके दर्शन और सत्संग को आती ही हैं लेकिन आज हमारे यहाँ एक बड़े संत आ गये थे ।'' ऐसा करके उस संत के लिए उन्होंने मनगढ़ंत प्रशंसा के फूल बरसाये । सत्संग और संतदर्शन तो कर्मठी का जीवन ही था ।

अब कर्मठी का मन व्याकुल हो गया । वह बोली : ''तुम्हारे एकांतप्रिय, परम विश्रांति पाये हुए, पहुँचे हुए महापुरुष के दर्शन मुझे नहीं करवाओगी ?''

उन कुलटाओं ने कहा : ''दर्शन तो हो सकते हैं । वे सुबह-सुबह समाधि से उठते हैं तब आप वहाँ आ जायें, नहीं तो आप प्रभात को यमुना-स्नान करने जाती हैं तब हम आपको लेने आ जायेंगी।''

सुबह एक कुलटा तो हसनबेग के निवास पर रही, जहाँ वह संतवेश में धोखा करना चाहता था । दूसरी यमुना किनारे आ गयी और पूर्वायोजित मकान में कर्मठी बाई को लिवा ले गयी । फिर इधर-उधर झाँककर बोली :

''मालूम होता है कि वे संत कहीं बाहर सैर करने गये हैं । आप बैठो, मैं अभी उनको बुला लाती हूँ ।'' ऐसा कह के उस कुलटा ने अर्गला (सिटकिनी) लगाकर बाहर से दरवाजा बंद कर दिया और छुपे हुए मिर्जा हसन को इशारा करके खिसक गयी । कर्मठी बाई सोचती है, 'इसने अर्गला क्यों लगा दी ?' इतने में मिर्जा हसन अपनेको सफल मानकर बड़ा प्रसन्न होता हुआ वहाँ आया ।

नृपस्य चितं कृपणस्य वित्तं
मनोरथा दुर्जनमानवानाम् ।
पुरुषभाग्यं च स्त्रियाः चरित्रं
देवो न जानाति कुतो मनुष्याः ?

'राजा का चित्त, कंजूस का धन, दुष्ट व्यक्तियों के मनोरथ, पुरुष का भाग्य और स्त्री के चरित्र को देवता भी नहीं जानते तो मनुष्यों की तो बात ही क्या है ?'

दुर्जन आदमी के मनोरथ देवता लोग भी नहीं जान सकते तो बेचारी कर्मठी बाई क्या जाने ? किंतु भगवान के भक्तों से दुर्जनों के ये दुष्ट विचार ज्यादा देर छुपे नहीं रह सकते । वह कर्मठी के निकट आया और अपनी बाँहें पसारकर कहता है :

''अरे, हुस्न की परी ! रूप-लावण्य की अम्बार !! सौन्दर्य की देवी !!! तेरी इतनी खूबसूरती क्या यमुना के ठंडे जल में गलाने के लिए अथवा तपस्या में तप मरने के लिए है ? बड़ी बाँवरी है ! तू तो मेरे दिल की रानी बन, आ मेरी इन भुजाओं में । तेरे को यहाँ तक बुलाने की मेरी ही साजिश थी । जिस संत के लिए तुम आयी हो, वही मैं हूँ ।''

मिर्जा हसन की कामविकार की माँग से उसके षड्यंत्र का सारा भाँडा कर्मठी के आगे फूट गया । कर्मठी जोरों-से चीखी और भागकर कमरे की दीवार से चिपक गयी ।

'मैं क्या देख रही हूँ प्रभु !... देव !!... परमेश्वर !!!... रक्षा करो, रक्षा करो ।' एकाध क्षण इस प्रकार अंतर्मुख होकर उसने अंतर्प्रार्थना की । **अंतरात्मा तो सात-सात पातालों में भी हमारा साथ नहीं छोड़ता तो कमरे में उसका साथ कैसे छोड़ेगा वह परमेश्वर !**

भीतर-ही-भीतर उसे सत्प्रेरणा मिली : 'मैं तेरे साथ हूँ । फिक्र न कर, हिम्मत कर ।' कर्मठी बाई ने सिंहगर्जना करते हुए कहा : ''अरे, दुष्ट ! कामांध ! धोखेबाज ! मैं तुझे मजा चखा सकती हूँ ।''

तभी याद आ गया गुरु का वचन 'किसीका अमंगल नहीं करना है' तो चुप हो गयी । मिर्जा हसन उसकी

गर्जना सुन के चार कदम पीछे चला गया परंतु उसकी कामवासना ने उसे फिर प्रेरित किया । वह बाँहें पसारकर फिर से कर्मठी के निकट आया तो देखता है कि यह तो भूखा शेरे बब्बर गरज रहा है ! वह परी कहाँ गयी ? तोबा !... तोबा !!... तोबा !!!...

शेर को देख पीछे भागता हुआ दरवाजे से बाहर निकलना चाहता है लेकिन दरवाजा कुलटा ने बाहर से बंद कर दिया था । अपना ही षड्यंत्र अपने ही गले की फाँसी बना !

''अरे, बचाओ-बचाओ ।'' कुलटाओं को पुकारता है, अपने मंत्रियों को पुकारता है किंतु क्या उस लीलाधारी की लीला है, कोई सगा-संबंधी नहीं आया ! वह पुकार कमरे में ही गूँजती है और पुकारते-पुकारते वह पस्त हो जाता है । 'बचाओ-बचाओ ।' जोरों की पुकार करके सिर पछाड़ता है, हाथों के थपेड़े मारता है दरवाजे को । क्रोधित शेर को अपनी ओर ताकते-गुर्राते देख हसन बेग का पाजामा आगे से गीला हो गया और वह बेहोश होकर गिर पड़ा । काफी देर के बाद उन कुलटाओं ने अर्गला खोली तो देखती हैं कि मिर्जा हसन इस हाल में !! बोलीं : ''मिर्जा हसनबेग ! क्या हुआ ? वह कहाँ गयी ?'' कर्मठी का कोई पता नहीं परंतु हसनबेग की दुर्दशा देखकर मंत्री, उसके चाटुकार तथा कुलटाएँ दंग रह गयीं ।

एक-दो दिन के बाद हसनबेग ने कहा : ''छुपे ढंग से पता लगाओ कि कर्मठी कहाँ है ?'' उन कुलटाओं ने जाकर देखा तो कर्मठी भगवान के ध्यान में मग्न है, मानों कोई घटना घटी ही नहीं है । कर्मठी ने दोनों से इस बारे में कोई बात ही नहीं की । कर्मठी के इस अलौकिक चमत्कार से मिर्जा हसनबेग का जीवन पलटा व अशर्फियों का थाल तथा हीरे-जवाहरात लेकर कर्मठी के चरणों में जा गिरा और बोला : ''मुझे माफ कर दो ।''

मगर कर्मठी देवी के साथ मानों कोई घटना ही नहीं घटी है । वे लोग कोई माया की कर्मठी को ले गये होंगे । - ऐसा कर्मठी के व्यवहार से वह परमेश्वर उन्हें महसूस करा रहा था । कर्मठी देवी ने अशर्फी आदि लेने से इन्कार कर दिया । हसन के बहुत गिड़गिड़ाने पर कर्मठी ने कहा : ''जाओ, साधु-संतों और भक्तों की सेवा में लगा दो ।'' मिर्जा हसन ने ऐसा ही किया ।

धन्य है कर्मठी देवी ! जिसने गुरु के कृपा-प्रसाद से श्रीकृष्ण के स्वरूप का ज्ञान पाया । **कर्षति आकर्षति इति कृष्णः** । जो कर्षित कर दे, आकर्षित कर दे, आनंदित कर दे । जो सच्चिदानंद है, जिसके सत् अंश से सृष्टि है, चित् अंश से जीवों में चेतना है और आनंद अंश से सबके हृदय में सुखाभास होता है; जो सृष्टि की उत्पत्ति-स्थिति एवं प्रलय का कारण है और जिसको प्रणाम करनेमात्र से तीनों तापों का शमन होता है, वह सर्वेश्वर, परमेश्वर, सर्वव्यापी ईश्वर है व अभी भी प्राणिमात्र का आत्मा बना बैठा है ।

सच्चिदानंदरूपाय विश्वोत्पत्त्यादिहेतवे ।
तापत्रयविनाशाय श्रीकृष्णाय वयं नुमः ॥

अपनी सत्ता-स्फूर्ति से तुम्हारे-हमारे हृदय की धड़कनें चलाता है। हृदय की धड़कनें बंद होने के बाद भी तुम्हारा और हमारा जो साहेब साथ नहीं छोड़ता, उस साहेब के लिए गुरु अर्जुनदेव ने कहा है :

सो ठाकुरु सद सदा हजूरे ॥

ता कउ अंधा जानत दूरे ॥

'वह साहेब सदा हुजूर है, अंधा उसको दूर समझता है ।'

वे बड़भागी हैं जो उस साहेब का जप करते हैं, ध्यान करते हैं, चिंतन करते हैं, उसमें आनंदित होते हैं, शांत होते हैं और उसीके लिए अपनेको भगवान की भक्ति में लगा देते हैं । उन बच्चे-बच्चियों के माँ-बाप धनभागी हैं, जिनको यौवन में काम नहीं राम चाहिए, भोग नहीं भगवान चाहिए । उनके माता-पिताओं को टोकनेवालों की बुद्धि पर भगवान विशेष कृपा करें । भगवान उन्हें सद्बुद्धि दें ।

'अरे, अभी तक तुम्हारे लड़के ने शादी नहीं की, इतना बड़ा हो गया !... अभी तक तुम्हारी कन्या ने शादी नहीं की !' उसने तो शादी कर ली मीरा की नाईं अपने गिरधर गोपाल से, अपने परमेश्वर से । कर्मठी बाई के लिए लोग उसके माँ-बाप को बहुत ताने मारते थे ।

माँ-बाप ने कर्मठी बाई की शादी तो करा दी पर वह पुरुषार्थ करके अपने आत्मा-परमात्मा को जानकर सदा के लिए शाद-आबाद हो गयी । चौरासी लाख योनियों के फेरों सें वह देवी छूट गयी । कवियों ने कर्मठी बाई के लिए क्या सुंदर गाया है, संतों ने उसके लिए वृंदावन में क्या-क्या आलापा है :

धन्य पिता धनि मात धन्य मति अबला जन की ।
तजी बिषै संसार बिहार निहारन मन की ॥
हसनबेग इक जमन देखि दुष्टता बिचारी ।
करि नाहर कौ रूप त्रास दै नाथ उबारी ॥

धन्य हैं कर्मठी के माता-पिता और धन्य है कर्मठी की दृढ़ भगवद्भक्ति !

*

यह कैसी

समय के साथ समाज का बदलना, परिवर्तित होना अवश्यंभावी है किंतु इस परिवर्तन में राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित रखना हमारा महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है । वर्तमान समय में हमने आर्थिक व औद्योगिक क्षेत्रों में उन्नति के साथ ही नैतिक पतन की ओर भी तीव्रता से कदम बढ़ाये हैं । अब भाषा को ही ले लें । आज अंग्रेजी भाषा बड़ी तेजी-से अपने पैर पसार रही है । लगभग सभी सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं में अधिकतर कार्य अंग्रेजी भाषा में ही किये जाते हैं । यद्यपि अंग्रेजों को भारत छोड़े हुए ५९ वर्ष बीतने को हैं, फिर भी भारतवासियों के मन से गुलामी के संस्कार पूर्णतः नष्ट नहीं हुए हैं । आज भी असंख्य भारतवासी अंग्रेजी में बात करने तथा हिन्दी शब्दों के बीच में अंग्रेजी शब्दों को घुसेड़कर अपनेको सुशिक्षित व सभ्य समझते हैं । जबकि इससे तो यही पता चलता है कि उन्हें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का ही अधकचरा ज्ञान है । तभी तो वे न पूरी तरह से हिन्दी बोल पा रहे हैं और न ही अंग्रेजी ।

अन्य देशों में अपनी मूल संस्कृति को सुरक्षित रखना, सँजोना प्रत्येक नागरिक का राष्ट्रीय कर्तव्य माना जाता है लेकिन हम अपनी सनातन संस्कृति की महानता को न समझते हुए एक विदेशी भोगवादी सभ्यता की भाषा को स्थान दे रहे हैं, यह कैसी विडम्बना है ! यदि हम तटस्थ होकर विश्लेषण करें तो अंग्रेजी भाषा में ऐसी अनेकों गलतियाँ हैं, जिनका पाश्चात्य भाषाविज्ञानियों के पास भी कोई संतोषकारक जवाब नहीं है । जैसे :

(१) अंग्रेजी भाषा में 'प्राइमरी' (Primary) शब्द (प्रारंभ) किसी प्रारंभिक अवस्था का द्योतक है, जबकि 'प्राइम मिनिस्टर' (प्रधानमंत्री) और 'प्राइम टाइम' (सर्वोत्तम समय) जैसे कुछ शब्दों में 'प्राइम' शब्द सर्वोच्च, सर्वोत्तम अर्थ का द्योतक होता है । एक ही शब्द का यह प्रत्यक्षतः परस्पर विरोधी अभिप्राय क्यों है ?

विडम्बना !

(२) 'रेंगल' (Wrangle) शब्द का अर्थ होता है झड़प, झगड़ा, तू-तू, मैं-मैं या उच्च स्वर में अशिष्ट-असभ्य तर्क-वितर्क करना और इसी 'रेंगलर' शब्द का प्रयोग प्रथम श्रेणी के गणितज्ञ के लिए भी किया जाता है । यह विरोधाभास क्यों है ?

(३) अंग्रेजी भाषा में जन्मदात्री माँ के लिए 'ममी' शब्द प्रयुक्त किया जाता है । जिसका अर्थ होता है 'मसाला लगाकर सुरक्षित रखा गया शव ।' क्या ममता की मूर्ति माँ को शव जैसा अशोभनीय नाम देना उचित है ?

(४) इसी प्रकार पिता के लिए 'डैड' शब्द भी पिता की पूजनीय छवि को अपमानित ही करता है । अंग्रेजी भाषा में 'डैड' शब्द का अर्थ है 'मरा हुआ व्यक्ति' । क्या अपनेको जीवन देनेवाले पिता की समानता शव से की जानी चाहिए ?

(५) अंग्रेजी में 'आप', 'तुम' और 'तू' इन सभीके लिए एक ही शब्द 'यू' का प्रयोग किया जाता है । अर्थात् अपने से श्रेष्ठ व आदरणीय जनों, बराबरी के एवं छोटे लोगों को एक ही श्रेणी में रख दिया गया । परस्पर सम्मान देने के लिए जिस भाषा में शब्द ही नहीं हैं उसे महत्ता देकर हम कितनी भारी भूल कर रहे हैं !

(६) इसी प्रकार मामा, चाचा सभीको 'अंकल' कहकर पुकारा जाता है, जिससे स्पष्ट ही नहीं होता कि किसे बुलाया जा रहा है ।

(७) भाभी और साली के संबंध में एक ही शब्द 'सिस्टर इन लॉ' का प्रयोग किया जाता है, जो कि भ्रमोत्पादक है ।

(८) स्नेहपूर्ण संबंधों में 'लॉ' (कानून) शब्द का प्रयोग बहुत ही अनुपयुक्त तथा अपमानजनक लगता है । भारतीय संस्कृति में सास को माँ के ही समकक्ष माना जाता है । फिर अंग्रेजी भाषा को अपनाकर सासु माँ के पवित्र रिश्ते में कानून को घसीटकर उसे 'कानूनन माँ' (मदर इन लॉ) कहना कितना निम्नकोटि का बर्ताव करना है ! क्या सास मात्र कानूनन माँ हैं ? उनके प्रति कोई अपनत्व नहीं है ?

(९) अंग्रेजी भाषा में गर्म पेय पदार्थों के मिश्रण को 'कॉकटेल' कहा जाता है, जबकि उनमें न तो मुर्गा (कॉक) होता है और न ही पूँछ (टेल) ।

(१०) सितम्बर (सप्तम्बर), अक्तूबर (अक्टोबर), नवम्बर और दिसम्बर (दशम्बर) नाम यद्यपि क्रमशः ७वें, ८वें, ९वें और १०वें मासों के द्योतक हैं, तथापि वे प्रचलित अंग्रेजी वर्ष में ९वें, १०वें, ११वें और १२वें मास के रूप में ही निरूपित किये जाते हैं । ऐसा क्यों है ?

इस प्रकार की अनेकों विसंगतियाँ अंग्रेजी भाषा में भरी पड़ी हैं, जिनका कोई हल नहीं है । इसी तरह शब्दों की कंगालियत अंग्रेजी भाषा में साफ नजर आती है । अब तो उन्होंने अंग्रेजी भाषा में हिन्दी शब्दों को लेना प्रारम्भ कर दिया है और अपनी चोरी छुपाने के लिए हिन्दी शब्दों को थोड़ा-बहुत फेर-बदलकर उन्हें अंग्रेजी भाषा का ही शब्द घोषित कर देते हैं ।

अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी शब्दों के मामले में बहुत ही समृद्ध है । इसका शब्दकोश काफी विशाल है । इसमें भावों को सहजता से प्रदर्शित करने का अद्वितीय सद्गुण है क्योंकि इसकी उत्पत्ति संस्कृत से हुई है, जो कि मूल भाषा है । अतः इसका शब्द-विन्यास, वाक्य-रचना बहुत ही सुग्राह्य है । राष्ट्रभाषा हिन्दी को छोड़कर अंग्रेजी भाषा को अपनाना अपनी महान संस्कृति का अपमान करना है । इसलिए प्रत्येक भारतीय अपने जीवन-व्यवहार में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने के बजाय हिन्दी भाषा को सम्पूर्ण रूप से स्थान दे, यह हमारे देश व समाज के लिए निश्चय ही गौरव की बात होगी ।

प्रसंग प्रवाह

गायें सदा लक्ष्मी की मूल हैं । उनमें पाप का लेशमात्र भी नहीं है । वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती हैं और दुहने पर अमृत ही प्रदान करती हैं । वे अमृत का आधार हैं । समस्त लोक उनको नमस्कार करते हैं ।

गौ महिमा

च्यवन ऋषि जल में खड़े-खड़े तप करते थे । वे जल-जंतुओं को अपनी संतान की नाईं ही स्नेह करते थे । बारह वर्ष जल में साधना करने से वे जल-जंतुओं के परिवारवाले जैसे ही हो गये । एक बार गंगा-यमुना के संगम पर मछुआरों ने लम्बा-चौड़ा जाल बिछाया । जब उन्होंने जाल खींचा तो च्यवन ऋषि सहित बहुत से मच्छ-कच्छ भी जाल में फँसे हुए आये ।

जाल को खींचकर धरती पर लाने से मच्छ तड़पने लगे । उनको तड़पते देखकर च्यवन ऋषि को वैसी ही पीड़ा होने लगी जैसे बच्चा तड़पता हो, मौत के मुँह में पड़ा हो तो पिता को होती है । जब मछुआरों ने जाल में च्यवन ऋषि को देखा तो वे घबरा गये और बोले :

''महाराज ! क्षमा करो ।''

ऋषि बोले : ''मेरे को तो कोई हरकत नहीं किंतु मेरे साथ जलक्रीड़ा करनेवाले ये जलचर छटपटा रहे हैं । तुम इन सभीको छोड़ दो । ये जीवित रहेंगे तो मैं जीवित रहूँगा, नहीं तो मैं भी इनके साथ मर जाऊँगा ।''

खबर राजा नहुष तक पहुँची । राजा नहुष च्यवन ऋषि का प्रभाव जानते थे । वे मंत्रियों सहित च्यवन ऋषि के पास पहुँचे, आदरसहित प्रणाम-पूजन कर प्रार्थना की : ''महाराज ! मैं आपका क्या प्रिय करूँ ?''

ऋषि बोले : ''राजा नहुष ! इन्होंने कई दिनों से सपने देखे हैं और मेहनत करके बड़ा जाल बिछाया है । ये मछलियाँ ही इनकी रोजी-रोटी का साधन हैं । मछलियों का इनको जो कुछ मूल्य मिल सकता है वह और मेरा मूल्य इनको चुका दो ।''

राजा ने कहा : ''मछुआरों को मैं हजार मुहरें दे देता हूँ ।''

''बस ! तुमने मेरा मूल्य इतना ही आँका ?''

राजा घबराये : ''नहीं-नहीं, महाराज ! लाख मुहरें देता हूँ ।''

''नहुष ! च्यवन ऋषि को तुमने क्या मान रखा है ?''

नहुष और घबराये : ''आधा राज्य दे दूँ ?''

''बस !''

''पूरा राज्य दे दूँ ?''

ऋषि भीतर से प्रसन्न हुए पर भगवान ऋषि के द्वारा क्या पता क्या करवाना चाहते थे ? च्यवन ऋषि गाय की महिमा जानते थे । गायों का फायदा लोगों को मिले इसलिए भगवान ने क्या पता कैसी लीला रची कि ऋषि बोले : ''राजन् ! जाओ ऋषि-मुनियों से मिलो । वे तुम्हें मेरा मूल्य बतायेंगे ।''

राजा अपने मंत्रियों से विचार-विमर्श कर ही रहे थे कि इतने में गौ के पेट से उत्पन्न एक मुनि वहाँ आ पहुँचे । राजा ने उन्हें अपना धर्मसंकट बताया और पूछा :

''महाराज ! उनका क्या मूल्य हो सकता है ?''

गोजात मुनि बोले : ''जैसे धरती पर गाय अमूल्य है, ऐसे ही संत धरती पर अमूल्य हैं । उनके बदले में आप गाय दे देंगे तो संत का मूल्य चुकाने का आपको फल हो जायेगा ।''

राजा नहुष ने एक दुग्धधारी गाय मछुआरों को अर्पण करके च्यवन ऋषि से कहा : ''ऋषिवर ! मैंने आपका मूल्य चुका दिया ।''

''कितने करोड़, कितने अरब ?''

''महाराज ! अरबों-खरबों से जिसका मूल्य नहीं चुकाया जा सकता ऐसा ईश्वरीय वैभव जिसमें है वह गाय, आपकी बराबरी के मूल्य में मैंने चुका दी ।''

''तुमने उचित मूल्य दिया है । मैं इस संसार में गौओं के समान दूसरा कोई धन नहीं देखता हूँ ।''

गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते ।
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च ।
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः ॥
गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु ।

'गायें सदा लक्ष्मी की मूल हैं । उनमें पाप का लेशमात्र भी नहीं है । वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती हैं और दुहने पर अमृत ही प्रदान करती हैं । वे अमृत का आधार हैं । समस्त लोक उनको नमस्कार करते हैं । गौओं के संपूर्ण गुणों का वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता ।'

(महाभारत, अनुशासन पर्व)

तत्पश्चात् मछुआरों ने च्यवन ऋषि को उन्हें दी गयी गाय स्वीकार करने की प्रार्थना की । गाय स्वीकार करके च्यवन ऋषि ने कहा : ''मछुआरो ! इस गोदान के प्रभाव से तुम्हारे सारे पाप नष्ट हो गये । तुम जल में उत्पन्न हुई इन मछलियों के साथ स्वर्ग को जाओ ।''

च्यवन ऋषि के आशीर्वाद से वे मछुआरे मछलियों के साथ स्वर्ग को चले गये । उनको इस प्रकार स्वर्ग जाते देख राजा नहुष को बड़ा आश्चर्य हुआ । वे च्यवन ऋषि और गोजात मुनि का पूजन कर उनसे धर्म में स्थित रहने का वरदान पाकर अपनी राजधानी लौट आये ।

भूल सुधार : पिछले माह के अंक में पृष्ठ २३ पर दिये गये सुखपूर्वक प्रसूति के यंत्र में सभी अंक हिन्दी में लिखें ।

दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन के नियम

(१) प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में उठें । सुबह-शाम खुली हवा में टहलें, दौड़ें ।

(२) योगासन, प्राणायाम, जप, ध्यान, संयम-सदाचार आदि का नियम लें ।

(३) दिन में कम-से-कम एक बार 'देव-मानव हास्य प्रयोग' करें ।

(४) मोटे व सूती वस्त्र पहनें, कृत्रिम (synthetic) नहीं ।

(५) संयम से रहें, ऋतुचर्या के अनुसार आहार-विहार करें ।

(६) चाय-कॉफी, शराब-कबाब, धूम्रपान, पान-मसाला आदि का सेवन न करें ।

(७) पेशाब करने के तुरंत बाद पानी न पीयें, न ही पानी पीने के तुरंत बाद पेशाब जायें । इससे हानि होती है । मल-मूत्र का वेग नहीं रोकें ।

(८) सप्ताह में कम-से-कम एक दिन रोज के सामान्य कार्यों से मुक्त हो जायें ।

सदा एक जैसा काम,
लायेगा असमय बुढ़ापा और थकान !

(९) स्वास्थ्य मंत्र 'ॐ हंसं हंसः' का नित्य १०८ बार (एक माला) जप करें ।

(१०) संतों के सत्संग-सान्निध्य में स्वयं जायें व दूसरों को भी ले जायें ।

संकल्पशुद्धि से चित्तशुद्धि

पहले यह बात कही गयी थी कि कर्तव्यरूप से प्राप्त कार्य को धैर्य और उत्साहपूर्वक पूरा कर देने से करने की वासना मिटकर स्वतः ही सहज निवृत्ति प्राप्त होती है और साधक का चित्त शुद्ध होता चला जाता है ।

अब यह विचार करना चाहिए कि मनुष्य का हरेक कार्य, उसकी हरेक प्रवृत्ति शुद्ध और सही अर्थात् जैसी होनी चाहिए, ठीक वैसी कैसे हो ? विचार करने पर मालूम होगा, प्रवृत्ति की शुद्धि के लिए हरेक प्रवृत्ति के पहले कर्ता के मन में संकल्प की शुद्धि अनिवार्य है ।

बुरे संकल्प और भावना का त्याग करके, अच्छे संकल्प और अच्छी भावना को स्वीकार करने से संकल्प की शुद्धि होती है । बुरे संकल्प और बुरी भावनाएँ उनको कहते हैं, जिनमें किसीका अहित निहित हो तथा अच्छे संकल्प और अच्छी भावनाएँ वे हैं, जिनमें हित भरा हो । जिसमें दूसरों का हित होता है उसीमें साधक का भी हित होता है और जिसमें दूसरों का अहित होता है उसमें अपना भी अहित ही होता है । दूसरे के साथ की हुई भलाई ही अपने प्रति भलाई होती है, दूसरे के साथ की हुई बुराई ही अपने प्रति बुराई होती है । इसमें कुछ भी संदेह नहीं है, तथापि मनुष्य दूसरे का अहित करके अपना हित चाहता है, यह बड़ी भारी भूल है ।

संकल्प की शुद्धि के लिए वेदों में ईश्वर से प्रार्थना करने का प्रकार बताया गया है । इसके लिए 'शिवसंकल्प' नाम का एक प्रकरण 'शुक्ल यजुर्वेद' में आता है - ऐसा सुना है ।

शुभ संकल्पों का चित्त पर बहुत प्रभाव पड़ता है । इससे चित्त की शुद्धि सुगमता से हो जाती है । इसलिए साधक को चाहिए कि यदि संकल्प करना ही हो, संकल्प किये बिना मन न माने तो शुभ संकल्प ही करना चाहिए । अशुभ संकल्प कभी नहीं करना चाहिए ।

यदि मन में ऐसी शंका उठे कि क्या चित्त शुद्ध होने के पहले शुभ संकल्पों का करना साधक के वश की बात है ? क्या वह इसमें स्वाधीन है ? तो यों समझना चाहिए कि किसीका भी चित्त पूर्णरूप से अशुद्ध नहीं होता । उसमें अशुद्धि के साथ-साथ शुद्धि का अंश भी अवश्य रहता है । उसीके प्रभाव से मनुष्य के मन में अपना सुधार करने की इच्छा होती है । अतः इसमें कोई संदेह नहीं कि मनुष्य बुरे संकल्पों का त्याग करके अच्छे संकल्पों को करने में स्वाधीन है । भगवान की अहैतुकी कृपा से वह इस कार्य में सफल हो सकता है ।

संकल्प के अनुसार ही मनुष्य की प्रवृत्ति हुआ करती है । अतः शुभ संकल्पों से मनुष्य की शुभ कार्यों में प्रवृत्ति होती है और उन कामों को भगवान के नाते धैर्य और कुशलतापूर्वक पूरा करने से कर्ता का भगवान से संबंध हो जाता है ।

यह नियम है कि जिस पर मनुष्य का विश्वास होता है उसीसे संबंध होता है, जिससे संबंध होता है वही प्रिय होता है, प्रिय का ही स्मरण होता है, जिसका स्मरण होता है, उसीका चिंतन होता है और यह चिंतन ही आगे जाकर ध्यान, समाधि बन जाता है । जब साधक समाधि के रस से भी उपरत हो जाता है, उसे भी नहीं चाहता, तब उसे विशुद्ध प्रेम की प्राप्ति होती है ।

शास्त्र वचनामृत

प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् । तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं हरिनाम हरेदघम् ॥

'जैसे आग की चिनगारी भूल से भी छू जाय तो वह जला ही देती है, उसी प्रकार होंठों से हरिनाम का स्पर्श होते ही वह समस्त पापों को हर लेता है ।' **(स्कंद पुराण, काशी खण्ड, पू. : २१.५७)**

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(गतांक से आगे)

दैत्य प्रह्लाद का सारा साम्राज्य उनका परिवार था । सारी प्रजा को वे पुत्रवत् प्रेम करते थे, फिर भी सांसारिक दृष्टि से और विशेषकर राजमाता कयाधू के सन्तोष व अनुमोदन के लिए उनको पुत्रों के जन्मकाल में अवश्य ही आनन्द-मंगल उत्सव मनाना पड़ता था । धीरे-धीरे राजकुमार बढ़ने लगे, उनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध प्रह्लादजी ने अपने विचारानुसार ही किया किंतु दैत्यवंश का प्रभाव सभी राजकुमारों में विशेषरूप से भरा था । विद्वान होने पर भी राजकुमारों में अभिमान था, देव-ब्राह्मण-द्रोह था और आसुरी भाव थे । यद्यपि पिता के भय से उनके देव-द्विज द्रोही भाव प्रकट नहीं होते थे फिर भी भीतर-ही-भीतर वे भाव बढ़ते और साथ ही दृढ़ भी होते जा रहे थे । गुप्त दूतों द्वारा प्रह्लादजी को अपने पुत्रों के हार्दिक भाव धीरे-धीरे विदित हुए और उनके हृदय में एक भारी चिन्ता उत्पन्न हुई कि 'पुत्रों को देव-द्रोही एवं द्विज-द्रोही आसुरी भाव से किस प्रकार बचावें और उनको कैसे सुधारें ?'

एक दिन प्रह्लाद राजसभा में बैठे हुए थे । द्वारपाल ने देवर्षि नारदजी के पधारने का समाचार दिया। देवर्षि का शुभागमन सुन प्रह्लादजी के आनन्द की सीमा न रही । वे तुरन्त राजद्वार पर जा पहुँचे; देवर्षि नारद के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया और उनको आगे कर राजसभा में ले गये । वहाँ अर्घ्य, पादार्घ्य दे उनका सविधि पूजन किया और स्वयं महारानी सुवर्णा ने उनकी आरती की । देवर्षि नारदजी की आज्ञा से प्रह्लादजी बैठ गये और महारानी सुवर्णा भी अपने पुत्रों सहित बैठ गयीं । सारी राजसभा में प्रसन्नता छा गयी। सब लोगों ने एक स्वर से सम्राट प्रह्लाद के सहित महर्षि नारद का जय-जयकार किया। सभासदों के यथास्थान बैठ जाने पर नारदजी ने कहा : ''दैत्यर्षि प्रह्लाद ! यद्यपि हमारे आगमन से तुम बड़े प्रसन्न प्रतीत होते हो किंतु तुम्हारी आन्तरिक चिन्ता के भाव छिपाने पर भी छिपते नहीं हैं। यह क्या बात है ? तुमको किस बात की चिन्ता है ? जिसको शस्त्रों के आघात की चिन्ता नहीं हुई, मतवाले हाथियों से कुचले जाने में चिन्ता नहीं हुई, सर्पों से काटे जाने में चिन्ता नहीं हुई और महागरल के खिलाये जाने पर भी चिन्ता न हुई । बेटा ! जिसको प्रासाद और पहाड़ों की चोटियों पर से गिराये जाने की चिन्ता न थी, समुद्र में डुबाये जाने की चिन्ता न थी, अग्नि की महाचिता में बिठाये जाने पर चिन्ता न थी और प्रबल पराक्रमी दैत्यराज हिरण्यकशिपु के अचूक खड्ग प्रहार की भी चिन्ता नहीं थी, वही आज चिन्तित क्यों है ? तुम जैसे परम भागवत की चिन्ता से भगवान स्वयं चिन्तित होते हैं । बेटा ! तुम्हारी चिन्ता का कारण क्या है ?''

प्रह्लाद : ''भगवन् ! आप तो अंतर्यामी हैं और इसी कारण आपको लोग भगवान का मन कहते हैं । फिर आप मुझसे चिन्ता का कारण पूछते हैं, यही आश्चर्य है !''

देवर्षि नारद : ''राजन् ! जिस राजा के राज्य में गौ, द्विज, देवताओं की यथोचित रक्षा, सेवा और पूजा न होती हो तो उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए । जिस राज्य में दीन-हीन प्रजा को मदांध, बलशाली लोग सताते हों और उनको यथोचित दण्ड देने का विधान न हो, उस राज्य के स्वामी को चिन्ता होनी चाहिए । जिस राजा के शासन में पक्षपात किया जाता हो, समत्वभाव न हो उसको चिन्ता होनी चाहिए । जिस राजा के साम्राज्य में नदियाँ जलपूर्ण न हों, सरोवरों में जल न भरा हो, किसानों को खेती के लिए, पशुओं को स्वतन्त्र विचरण के समय पीने के लिए, निवासियों और समस्त यात्रियों के लिए भी मार्गों में सुजल का प्रबन्ध न हो, उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए ।

(क्रमशः)

नौ योगीश्वरों के उपदेश

(गतांक से आगे)

पहले-पहल जगत की उत्पत्ति के लिए उनके रजोगुण के अंश से ब्रह्मा हुए, फिर वे आदिपुरुष ही संसार की स्थिति के लिए अपने सत्त्वांश से धर्म तथा ब्राह्मणों के रक्षक यज्ञपति विष्णु बन गये । फिर वे ही तमोगुण के अंश से जगत के संहार के लिए रुद्र बने । इस प्रकार निरंतर उन्हींसे परिवर्तनशील प्रजा की उत्पत्ति, स्थिति और संहार होते रहते हैं ।

दक्ष प्रजापति की एक कन्या का नाम था मूर्ति। वह धर्म की पत्नी थी। उसके गर्भ से भगवान ने ऋषिश्रेष्ठ शान्तात्मा 'नर' और 'नारायण' के रूप में अवतार लिया। उन्होंने आत्मतत्त्व का साक्षात्कार करानेवाले उस भगवदाराधनरूप कर्म का उपदेश किया, जो वास्तव में कर्मबंधन से छुड़ानेवाला और नैष्कर्म्य स्थिति को प्राप्त करानेवाला है। उन्होंने स्वयं भी वैसे ही कर्म का अनुष्ठान किया। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि उनके चरणकमलों की सेवा करते रहते हैं। वे आज भी बदरिकाश्रम में उसी कर्म का आचरण करते हुए विराजमान हैं।

'ये अपनी घोर तपस्या के द्वारा मेरा धाम छीनना चाहते हैं ।'- ऐसी आशंका करके इन्द्र ने स्त्री, वसंत आदि दल-बल के साथ कामदेव को उनकी तपस्या में विघ्न डालने के लिए भेजा । कामदेव को भगवान की महिमा का ज्ञान न था, इसलिए वह अप्सरागण, वसंत तथा मन्द-सुगन्ध वायु के साथ बदरिकाश्रम में जाकर स्त्रियों के कटाक्ष बाणों से उन्हें घायल करने की चेष्टा करने लगा।

आदिदेव नर-नारायण ने यह जानकर कि यह इन्द्र का कुचक्र है, भय से काँपते हुए काम आदिकों से हँसकर कहा, उस समय उनके मन में किसी प्रकार का अभिमान या आश्चर्य नहीं था : ''कामदेव, मलयमारुत और देवांगनाओ ! तुम लोग डरो मत; हमारा आतिथ्य स्वीकार करो। अभी यहीं ठहरो, हमारा आश्रम सूना मत करो।''

राजन् ! जब नर-नारायण ऋषि ने उन्हें अभयदान देते हुए इस प्रकार कहा, तब कामदेव आदि के सिर लज्जा से झुक गये। उन्होंने दयालु भगवान नारायण से कहा : ''प्रभो ! आपके लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि आप माया से परे और निर्विकार हैं। बड़े-बड़े आत्माराम और धीर पुरुष निरन्तर आपके चरणकमलों में प्रणाम करते रहते हैं। आपके भक्त आपकी भक्ति के प्रभाव से देवताओं की राजधानी अमरावती का उल्लंघन करके आपके परम पद को प्राप्त होते हैं।

इसलिए जब वे भजन करने लगते हैं, तब देवता लोग तरह-तरह से उनकी साधना में विघ्न डालते हैं। किंतु जो लोग केवल कर्मकाण्ड में लगे रहकर यज्ञादि के द्वारा देवताओं को बलि के रूप में उनका भाग देते रहते हैं, उन लोगों के मार्ग में वे किसी प्रकार का विघ्न नहीं डालते। परंतु प्रभो ! आपके भक्तजन उनके द्वारा उपस्थित की हुई विघ्न-बाधाओं से गिरते नहीं बल्कि आपके करकमलों की छत्रछाया में रहते हुए वे विघ्नों के सिर पर पैर रखकर आगे बढ़ जाते हैं, अपने लक्ष्य से च्युत नहीं होते।

बहुत-से लोग तो ऐसे होते हैं जो भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी एवं आँधी-पानी के कष्टों को तथा रसनेन्द्रिय और जननेन्द्रिय के वेगों को, जो अपार समुद्रों के समान हैं, सह लेते हैं-पार कर जाते हैं परंतु फिर भी वे उस क्रोध के वश में हो जाते हैं, जो गाय के खुर से बने गड्ढे के समान है और जिससे कोई लाभ नहीं है - आत्मनाशक है। और प्रभो ! वे इस प्रकार अपनी कठिन तपस्या को

(क्रमशः)
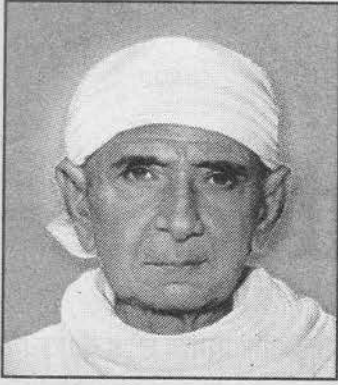
निरोगता का साधन

● ब्रह्मलीन स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज के अमृतवचन

(गतांक से आगे)

आज से २०-२५ वर्ष पहले छोटे-बड़े, युवान-वृद्ध, पुरुष-स्त्रियाँ सभी दूध, दही, मक्खन तथा घी खाना पसंद करते थे परंतु आजकल के युवान एवं युवतियाँ दूध के प्रति अरुचि व्यक्त करते हैं । साथ ही केक, बिस्कुट, चाय-कॉफी या जो तन्दुरुस्ती को बरबाद करनेवाली चीजें हैं, उनका ही सेवन करते हैं । यह देखकर विचार आता है कि ऐसे स्त्री-पुरुष समाज को श्रेष्ठ संतान कैसे दे सकेंगे ? निरोगी माता-पिता की संतान ही निरोगी पैदा होती है ।

मित्रो ! जरा रुको और समझदारीपूर्वक विचार करो कि हमारे स्वास्थ्य तथा बल की रक्षा कैसे होगी ? इस दुनिया में जन्म लेकर जिसने ऐश-आराम की जिंदगी गुजारी उसका तो दुनिया में आना ही व्यर्थ है ।

मेरा नम्र मत है कि प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है दुनिया में आकर दीर्घायु भोगने के लिए अपने स्वास्थ्य व बल की सुरक्षा का प्रयास करे तथा शरीर को सुदृढ़ व मजबूत रखने के लिए दूध, घी, मक्खन और मलाई युक्त सात्त्विक आहार के सेवन का आग्रह रखे।

स्वास्थ्य की सँभाल व ब्रह्मचर्य के पालन हेतु आँवले का चूर्ण व मिश्री के मिश्रण को पानी में मिलाकर पीने से बहुत लाभ होगा। इस मिश्रण व दूध के सेवन के बीच दो घण्टे का अंतर रखें ।

आध्यात्मिक व भौतिक विकास की नींव ब्रह्मचर्य है । अतः परमात्मा को प्रार्थना करें कि वे सद्बुद्धि दें व सन्मार्ग की ओर मोड़ें । वीर्य शरीर में फौज के सेनानायक की नाईं कार्य करता है, जबकि दूसरे अवयव सैनिकों की नाईं फर्ज निभाते हैं । जैसे सेनानायक की मृत्यु होने पर सैनिकों की दुर्दशा हो जाती है, वैसे ही वीर्य का नाश होने से शरीर निस्तेज हो जाता है ।

शास्त्रों ने शरीर को परमात्मा का घर बताया है । अतः उसे पवित्र रखना प्रत्येक स्त्री-पुरुष का पवित्र कर्तव्य है । ब्रह्मचर्य का पालन वही कर सकता है जिसका मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण होता है, फिर चाहे वह गृहस्थी हो या त्यागी ।

मैं जब अपनी बहनों को देखता हूँ तब मेरा हृदय दुःख-दर्द से आक्रान्त हो जाता है कि कहाँ हैं हमारी वे प्राचीन माताएँ ?

दमयंती, सीता, गार्गी, लीलावती, विद्याधरी,
विद्योत्तमा, मदालसा की शास्त्रों में हैं बातें बड़ी ।
ऐसी विदुषी स्त्रियाँ भारत का भूषण हो गयीं,
धर्मव्रत छोड़ा नहीं सदा के लिए अमर हो गयीं ॥

कहाँ हैं ऐसी माताएँ जिन्होंने श्रीरामचंद्रजी, लक्ष्मण, भीष्म पितामह और भगवान श्रीकृष्ण जैसे महान व प्रातःस्मरणीय व्यक्तियों को जन्म दिया ?

कहाँ हैं व्यासमुनि, कपिल व पतंजलि जैसे महान ऋषि, जिन्होंने हिमालय की हरी-भरी खाइयों व पर्ण-कुटीरों में बैठकर, कंदमूल खा के वेदांत, तत्त्वज्ञान, योग की पुस्तक व सिद्धांत लिखकर दुनिया को आश्चर्य में डाल दिया ?

आधुनिक नवयुवकों की हालत देखकर अफसोस होता है कि उन्होंने हमारे महापुरुषों के नाम पर कलंक लगाया है । वे इतने आलसी व सुस्त हो गये हैं कि एक-दो मील चलने में भी उन्हें थकान लगती है, वे बहुत ही डरपोक व कायर हो गये हैं।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'निरोगता का साधन' से क्रमशः)

व्यवहार में गुरुभक्ति

पंचम वेद 'महाभारत' में अनुशासन पर्व के अंतर्गत दानधर्म पर्व के १४५वें अध्याय में भगवान शंकर माता पार्वती से कहते हैं :

न तद् यज्ञफलं कुर्यात् तपो वाऽऽचरितं महत् ।
यत् कुर्यात् पुरुषस्येह गुरुपूजा सदा कृता ॥

यज्ञों का फल और किया हुआ महान तप भी इस जगत में मनुष्य को वैसा लाभ नहीं पहुँचा सकता, जैसा सदा किया हुआ गुरुपूजन पहुँचा सकता है ।

गुरूणां वैरनिर्बन्धो न कर्तव्यः कथंचन।
नरकं स्वगुरुप्रीत्या मनसापि न गच्छति ॥

गुरुजनों के साथ कभी वैर नहीं बाँधना चाहिए । अपने गुरु के प्रसन्न होने पर मनुष्य कभी मन से भी नरक में नहीं पड़ता ।

न ब्रूयाद् विप्रियं तेषामनिष्टं न प्रवर्तयेत्।
विगह्य न वदेत् तेषां समीपे स्पर्धया क्वचित् ॥

उन्हें जो अप्रिय लगे, ऐसी बात नहीं बोलनी चाहिए । जिससे उनका अनिष्ट हो, ऐसा काम भी नहीं करना चाहिए । उनसे झगड़कर नहीं बोलना चाहिए और उनके समीप कभी किसी बात के लिए होड़ नहीं लगानी चाहिए ।

यद् यदिच्छन्ति ते कर्तुमस्वतंत्रस्तदाचरेत् ।
वेदानुशासनसमं गुरुशासनमिष्यते ॥

वे जो-जो काम कराना चाहें, उनकी आज्ञा के अधीन रहकर वह सब कुछ करना चाहिए । वेदों की आज्ञा के समान गुरु की आज्ञा का पालन अभीष्ट माना गया है ।

कलहांश्च विवादांश्च गुरुभिः सह वर्जयेत् ।
कैतवं परिहासांश्च मन्युकामाश्रयांस्तथा ॥

गुरुजनों के साथ कलह और विवाद छोड़ दे । उनके साथ छल-कपट, परिहास तथा काम-क्रोध के आधारभूत बर्ताव भी न करे ।

असूयामपवादं च गुरूणां परिवर्जयेत् ।
तेषां प्रियहितान्वेषी भूत्वा परिचरेत् सदा ॥

गुरुजनों के दोष देखना और उनकी निंदा करना छोड़ दे । उनके प्रिय और हित का ध्यान रखते हुए सदा उनकी परिचर्या करे ।

गुरूणां योऽनहंवादी करोत्याज्ञामतन्द्रितः ।
न तस्मात् सर्वमर्त्येषु विद्यते पुण्यकृत्तमः ॥

जो आलस्य और अहंकार छोड़कर गुरुजनों की आज्ञा का पालन करता है, समस्त मनुष्यों में उससे बढ़कर पुण्यात्मा दूसरा कोई नहीं है ।

अनुवृत्तेर्विना धर्मो नास्ति सर्वाश्रमेष्वपि ।
तस्मात् क्षमावृतः क्षान्तो गुरुवृत्तिं समाचरेत् ॥

सभी आश्रमों में अनुवृत्ति (आज्ञापालन) के बिना कोई धर्म सफल नहीं हो सकता । इसलिए क्षमा से युक्त और सहनशील होकर गुरुसेवा करे ।

स्वमर्थं स्वशरीरं च गुर्वर्थे संत्यजेद् बुधः ।
विवादं धनहेतोर्वा मोहाद् वा तैर्न रोचयेत् ॥

विद्वान पुरुष गुरु के लिए अपने धन और शरीर को समर्पण कर दे । धन के लिए अथवा मोहवश उनके साथ विवाद (अनुचित व्यवहार) न करे ।

ब्रह्मचर्यमहिंसा च दानानि विविधानि च ।
गुरुभिः प्रतिषिद्धस्य सर्वमेतदपार्थकम् ॥

जो गुरुजनों से अभिशप्त है, उसके किये हुए ब्रह्मचर्य, अहिंसा और नाना प्रकार के दान - ये सब व्यर्थ हो जाते हैं ।

महापाप से बचाकर ईश्वर के रास्ते लगाया

जब हमने दीक्षा नहीं ली थी तब घर में पूज्य बापूजी का एक कैलेण्डर लगा हुआ था । मुझे एक बेटा और एक बेटी है तो तीसरी संतान नहीं चाहिए थी । इसलिए गर्भ रहा तो हम पाप के रास्ते जाकर उसे निकालना चाहते थे । रात में पूज्य बापूजी सपने में आये और बोले : 'ऐसा काम मत कर । यह बड़ा पाप है ।' मैंने सोचा, 'पहले कभी इस प्रकार इनके दर्शन नहीं किये । टीवी. पर तथा कैलेण्डर में इन्हें देखा था । उस दिन तो हम रुक गये परंतु सोचा कि 'चलो, लड़का है या लड़की इसकी जाँच करें ।' दूसरे दिन सुबह चार बजे पूज्य बापूजी सपने में आकर बोले : 'लड़की ही है, तू पाप नहीं करेगी ।' और हम गर्भपात के महापाप से बच गये ।

हम ९ महीने तक पूज्य बापूजी की किताबें तथा ज्ञानेश्वरी, दासबोध आदि ग्रंथ पढ़ते रहे । ९ महीने टी.वी., फिल्मी प्रोग्राम भी नहीं देखा । पूज्य बापूजी के वचन सत्य हुए । मैंने एक कन्या को जन्म दिया और गुरुदेव के निर्देशानुसार ९ महीने बिताने का परिणाम यह हुआ कि मेरी कन्या में जन्मजात भक्ति के संस्कार देखने को मिले एवं उसके जीवन में कई चमत्कारिक घटनाएँ भी घटीं ।

कैसी लीला है गुरुवर की कि हमें गर्भपात के महापाप से बचाकर ईश्वर के रास्ते लगाया ! अब तो हमारे परिवार के सभी लोग मंत्रदीक्षित हैं । धन्य हैं गुरुवर और उनकी लीलाएँ ! ऐसे गुरुवर के चरणों में कोटि-कोटि वंदन...

– सौ. विजया प्रह्लाद अंभोरे,
नांदेड़ (महा.) ।

कम-से-कम इतना तो करें...

२४ घंटे हैं आपके पास,
उसमें से ६ घंटे सोने में और ८ घंटे कमाने में लगा
दो तो १४ घंटे हो गये । फिर भी १० घंटे बचते हैं । उनमें से अगर
५ घंटे भी आप इधर-उधर, गपशप में लगा देते हैं, तब भी ५ घंटे भजन कर
सकते हैं... ५ घंटे नहीं तो ४, ४ नहीं तो ३, ३ नहीं तो २, २ नहीं तो कम-से-कम
१.५ घंटा तो रोज अभ्यास करो और यह १.५ घंटे का अभ्यास आपका कायाकल्प कर देगा ।

आप श्रद्धापूर्वक गुरुमंत्र का जप करेंगे तो आपके हृदय में विरहाग्नि पैदा होगी, परमात्म-प्राप्ति की भूख पैदा होगी ।

जैसे उपवास के दौरान सहन की गयी भूख आपके शरीर की बीमारियों को हर लेती है, वैसे ही भगवान को पाने की भूख आपके मन व बुद्धि के दोषों को, शोक व पापों को हर लेगी। कभी भगवान के लिए विरह पैदा होगा तो कभी प्रेम... **प्रेम से रस पैदा होगा और विरह से प्यास पैदा होगी ।** भगवन्नाम-जप आपके जीवन में चमत्कार पैदा कर देगा...

परमेश्वर का नाम प्रतिदिन कम-से-कम १००० बार तो लेना ही चाहिए। अर्थात् भगवन्नाम की १० मालाएँ तो फेरनी ही चाहिए ताकि उन्नति तो हो ही किंतु पतन न हो । अपने मंत्र का अर्थ समझकर प्रीतिपूर्वक जप करें । इससे बहुत लाभ होगा ।

– पूज्य बापूजी

बुद्धिशक्तिवर्धक प्रयोग : खास सर्दियों के लिए

* मालकांगनी (ज्योतिष्मती) उत्तम मेध्य है । १ से १० बूँद मालकांगनी तेल बतासे पर डालकर खायें। ऊपर से गाय का दूध पीयें । ४० दिन तक यह प्रयोग करने से ग्रहणशक्ति व स्मृति में लक्षणीय वृद्धि होती है। इन दिनों में उष्ण, तीखे, खट्टे पदार्थों का सेवन न करें । दूध व घी का उपयोग विशेषरूप से करें ।

* बादाम बौद्धिक, शारीरिक शक्ति व नेत्रज्योति वर्धक है । रात को ४ बादाम पानी में भिगो दें। सुबह छिलके उतार के जैसे हाथ से चंदन घिसते हैं, इस तरह घिस के दूध में मिलाकर सेवन करें । इस प्रकार से घिसा हुआ १ बादाम १० बादाम की शक्ति देता है । बालकों के लिए १-२ बादाम पर्याप्त हैं ।

मोरारजी देसाई गिनकर सात काजू खाते थे । इससे अधिक बादाम या काजू खाना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है । इससे गुर्दे (किडनी) और यकृत कमजोर हो जाते हैं । बिना भिगोये अथवा बिना छिलके उतारे बादाम खाने से पाचनतंत्र पर अधिक जोर पड़ता है ।

* काले तिल मस्तिष्क व शारीरिक दुर्बलता को दूर करते हैं । १० ग्राम तिल सुबह खूब चबा-चबाकर खायें । ऊपर से ठंडा पानी पीयें । बाद में २-३ घंटे तक कुछ न खायें । इससे शरीर को खूब पोषण मिलेगा । दाँत व केश भी मजबूत बनेंगे। (पित्त प्रकृति के लोग यह प्रयोग न करें।)

घरेलू नुस्खे

* २० ग्राम सौंफ के चूर्ण में समान मात्रा में मिश्री मिलाकर रात को गौदुग्ध से लेने पर नेत्रज्योति बढ़ती है ।

* ५० ग्राम सूखा अनारदाना पीसकर उसमें १०० ग्राम पुराना गुड़ मिलायें । १-१ चम्मच दिन में तीन बार लेने से बवासीर, अजीर्ण और अतिसार में ला[भ] होता है ।

* त्वचा पर कहीं भी खुजलाहट होने पर उड़द की दा[ल] को दही के साथ पीसकर लगायें, तुरन्त लाभ होगा ।

* ५०-५० ग्राम गुड़ और अजवायन को अच्छी तर[ह] कूटकर ६-६ ग्राम की गोलियाँ बना लें । प्रातः-साय[ं] एक-एक गोली पानी के साथ लें । एक सप्ताह में ही शरीर पर फैले हुए शीतपित्त के लाल चकत्ते दूर हो जाते हैं ।

* आँखों के नीचे का कालापन हटाने हेतु ककड़ी की फाँक और आलू के छिलकों को बारी-बारी से कालिमावाले स्थान पर रगड़ें । कब्ज से बचें व रात्रि जागरण न करें । अधिक मसालेदार व तले हुए पदार्थों के सेवन से बचें ।

संत च्यवनप्राश (केसरयुक्त)

शरद पूर्णिमा के बाद परिपक्व हुए आँवलों से आश्रम के पवित्र वातावरण में शुचिता व मंत्रोच्चार के साथ इस रसायन का निर्माण किया गया है।

स्वर्ण, चाँदी, ताम्र व लौह सिद्ध जल में उबले हुए वीर्यवान आँवलों में ५६ बहुमूल्य जड़ी-बूटियों के साथ चाँदी, लौह, बंग व अभ्रक भस्म एवं शुद्ध केसर मिलाकर गाय के घी में यह कल्प बनाया गया है। शरीर व बुद्धि के सर्वांगीण विकास के लिए यह परिपूर्ण है।

यह शरीरस्थ कोशिकाओं (cells) का नवनिर्माण करता है व पाचन-श्वसन-रक्ताभिसरण आदि समस्त प्रणालियों को कार्यशील बनाता है, जिससे वार्धक्य दूर होकर चिर यौवन व दीर्घायुष्य की प्राप्ति होती है ।

इसमें प्रयुक्त चाँदी मस्तिष्क व स्नायुओं के लिए
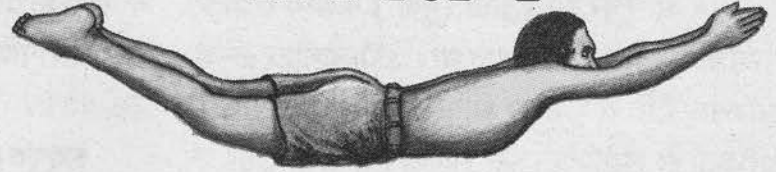
बल्य, लौह रक्तवर्धक, बंग वीर्यवर्धक व वंध्यत्वनाशक तथा अभ्रक देह को दृढ़ व युवावस्था को स्थिर करनेवाला है । केसर सौंदर्य, तेज व कांति वर्धक व वायुनाशक है । इन शक्तिशाली खनिज द्रव्यों व नैसर्गिक जीवनीय तत्त्वों से भरपूर होने के कारण इसके सेवन से शरीर की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। प्रतिभा, ओज, वीर्य, उत्साह व प्रसन्नता में वृद्धि होती है। शरीर में स्फूर्ति व नवचेतनता आती है। च्यवनऋषि इसका सेवन कर पुनः युवावस्था को प्राप्त हुए थे । स्वस्थ-रुग्ण, युवा-वृद्ध, दुर्बल, स्त्री-संभोग से क्षीण सभी लोग वर्ष भर इसका सेवन कर स्वस्थ व दीर्घायु प्राप्त कर सकते हैं।

नौकासन

इस आसन का आकार नौका अर्थात् नाव के समान है, इसलिए इसका नाम 'नौकासन' रखा है ।

विधि : जमीन पर पेट के बल लेट जायें और दोनों हाथों को डण्डे की भाँति आगे की ओर फैलाकर केवल पेट से ऊपर के और नीचे के भाग को बलपूर्वक दोनों तरफ खींचते हुए इतना उठायें कि शरीर के पाँवों और हाथों का हिस्सा नौका की तरह हो जाय।

लाभ : इस आसन के अभ्यास से -

१. पेट का मोटापा कम हो जाता है । २. पाचनशक्ति में वृद्धि होती है। ३. कब्ज की शिकायत दूर होती है । ४. फेफड़ों से संबंधित बीमारियों में लाभ होता है। ५. गला, पेट, पाँव, कंधे आदि की मांसपेशियों में भलीभाँति रक्तसंचार होने लगता है । ६. शरीर फुर्तीला व हलका हो जाता है । ७. आंतरिक और सूक्ष्म बल बढ़ाने में सहायता मिलती है।

शीत ऋतुचर्या

काल : नवम्बर, दिसम्बर, जनवरी, फरवरी

शारीरिक स्थिति	आहार (पथ्य)	त्याज्य वस्तुएँ	विशेष
* कफ का संचय होता है । * पित्त का शमन होता है । * वातावरण ठंडा होने से शरीर की उष्मा भीतर-ही-भीतर जठराग्नि को प्रदीप्त करती है । * शारीरिक बल बढ़ता है ।	* खारे तथा मधुर रसप्रधान द्रव्य । * पचने में भारी, पौष्टिकता से भरपूर, गरम व स्निग्ध तथा घी से बने पदार्थ । * गेहूँ, अरहर, चना, सोयाबीन, तिल, सूखा मेवा, विविध पाक का सेवन । उनमें भी शुंठी पाक अति उत्तम है । * मौसम की सब्जियाँ, फल, खजूर, नारियल । * छाछ में काली मिर्च, अजवायन, सोंठ, सेंधा नमक मिलाकर सेवन करें । * प्रातः सेवन हेतु रात को भिगोये हुए कच्चे चने, मूँगफली, गुड़, गाजर, केला, शक्करकंद आदि ।	* रुखे-सूखे, कसैले, तीखे तथा कड़वे रसप्रधान द्रव्य । * बर्फ, फ्रिज का पानी, शीत पदार्थ, वातकारक और बासी पदार्थ । * खटाई का अधिक सेवन न करें । * ताजा दही, छाछ, नींबू ले सकते हैं।	**हितकर** * प्रातः दौड़, व्यायाम, तेल मालिश । * प्रातः सूर्यस्नान, सूर्यनमस्कार । * हेमन्त ऋतु (२० दिसम्बर तक) में प्रातः हरड़े और सोंठ तथा शिशिर ऋतु (२१ दिसम्बर से १७ फरवरी २००७ तक) में हरड़े और पीपर का सेवन । **अहितकर** * उपवास, हलका भोजन । * दिन में सोना । * अत्यधिक ठंड सहना ।

संस्था समाचार

(ऋषि प्रसाद प्रतिनिधि)

२९ अक्टूबर को **बड़ौदा (गुज.)** में भव्य संकीर्तन यात्रा का आयोजन किया गया था। २ किलोमीटर लम्बी, आकर्षक रीति से सजे हुए अनेक वाहनों एवं सांस्कृतिक झाँकियों से सुसज्जित इस संकीर्तन यात्रा से शहर का वातावरण भगवन्नाम कीर्तन की पावन ध्वनि से गूँज उठा था।

श्री योग वेदांत सेवा समिति, बड़ौदा के तत्त्वावधान में स्थानीय नवलखी मैदान के विशाल प्रांगण में २ से ५ नवम्बर तक ४ दिवसीय सत्संग-शिविर संपन्न हुआ। सत्संग में आनेवाले सत्संगियों की संख्या की विशालता का पूर्वानुमान विशाल हृदयवाले आयोजक पुण्यात्माओं ने कर रखा था, साथ ही कर रखी थी कुंभ की तरह लोगों की भीड़ उमड़ जाने पर सभी संभावित परिस्थितियों के समाधान की पूर्ण तैयारी। १० लाख व्यक्तियों के सुव्यवस्थित बैठने की क्षमतावाला विशाल पंडाल पहले से ही तैयार कर लिया गया था।

मण्डप में ज्ञान खण्ड, भक्ति खण्ड, साधना खण्ड आदि विभिन्न खण्ड बनाये गये थे। सत्संग मंडप के बाहर विभिन्न देवी-देवताओं की आकर्षक मूर्तियाँ रखी गयी थीं, जो भारतीय सनातन संस्कृति की दिव्यता का अनुभव करा रही थीं। सत्संग स्थल पर पहुँचने के लिए बड़ौदा क्षेत्र के १७ स्थानों से बस व्यवस्था की गयी थी।

पहले २ दिन तो पूर्व निर्मित विशाल पंडाल से काम चल गया लेकिन तीसरे दिन श्रद्धालुओं की संख्या इस कदर बढ़ी कि विशाल पंडाल का भी विस्तार करना पड़ा। स्थानीय अखबारों व चैनलों ने इस महाआयोजन को महाकुंभ की संज्ञा देते हुए भूरि-भूरि प्रशंसा की। पंडाल में टीवी व स्क्रीन प्रोजेक्टर लगाकर संत व श्रोता की दूरी को कुछ कम करने का प्रयास किया गया।

पीछे बैठे श्रद्धालुओं को तो पूज्यश्री के केवल धवल वस्त्रों के ही दर्शन होते थे। पीछे खड़े कुछ लोग दूरबीन से संत शिरोमणि के निकटवत् दर्शन कर आनंदित होते देखे गये।

सद्गुरु की पूजा किये सबकी पूजा होय।

आत्मसाक्षात्कारी सद्गुरु की पूजा करने से सभी देव पूजित हो जाते हैं। इस सत्संग ज्ञानयज्ञ के प्रथम दिन देवप्रबोधिनी एकादशी की शाम कपूर से सद्गुरुदेव की आरती उतारी गयी। असंख्य प्रज्वलित दीपों से सारा मंडप आलोकित हो उठा।

उल्लेखनीय है कि 'स्कंद पुराण' के अनुसार देवउठी एकादशी को भगवान श्रीविष्णु की कपूर से आरती करने पर आराधक को कभी अकालमृत्यु या दुर्घटना में मृत्यु का शिकार नहीं होना पड़ता।

लगभग सभी ब्रह्मवेत्ता सद्गुरुदेव के निकट दर्शन के प्यासे थे। उनकी तृप्ति के लिए सत्संग की पूर्णाहुति कर पूज्यश्री व्यासपीठ पर ही विराजमान रहते एवं आगे बैठे भक्तों को जाने के लिए कहते और पीछेवालों के आगे आने का, निकट से दर्शन का रास्ता सुलभ करते... इस प्रकार सबकी साध पूरी करते, हँसते-हँसते, विनोद-विनोद में वेदांत की शिक्षा, संस्कार देते हरेक सत्र की पूर्णाहुति करते। पाश्चात्य कल्चर से आक्रांत इस भौतिकवादी कलियुग में भी अध्यात्म के प्रेमी, ब्रह्मवेत्ता सद्गुरुओं के प्रेमी भक्तों के आध्यात्मिक रुझान को, उनके हृदय में उमड़ती सद्गुरुप्रेम की उस निर्दोष भावधारा को नमन करने को जी चाहता है।

इस सत्संग-साधना शिविर में विद्यार्थियों के तन की तन्दुरुस्ती व शारीरिक विकास हेतु आहार-विहार के नियम, योगासन एवं बौद्धिक विकास हेतु भ्रामरी प्राणायाम, सारस्वत्य मंत्रजप, स्मृतिशक्तिवर्धक यौगिक प्रयोग तथा नैतिक ज्ञान व आध्यात्मिक सुषुप्त

योग्यताओं के विकास हेतु ध्यान, जप, सत्संग, कीर्तन तथा भारतीय संस्कृति के महापुरुषों के जीवन के प्रेरणाप्रद प्रसंगों का खजाना खुल गया था।

विद्यार्थियों की यादशक्ति, कलात्मकता, रचनात्मक कौशल आदि के विकास हेतु 'श्लोक पठन स्पर्धा' एवं 'वक्तृत्व स्पर्धा' का आयोजन किया गया तथा प्रत्येक स्पर्धा में प्रथम तीन स्थान प्राप्त करनेवाले विद्यार्थियों को पूज्य बापूजी के करकमलों से पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र प्राप्त हुए । विद्यार्थियों के साथ उनके अभिभावकों तथा शिक्षकों ने भी भौतिक व आध्यात्मिक उत्थान की उत्तम कुंजियाँ प्राप्त कीं ।

पूज्य बापूजी ने साधना में सफलता के अनेक गुर बताये : ''साधना के शिखर पर पहुँचने के तीन सोपान हैं : कर्तव्यपरायणता, साधनापरायणता और इष्ट के प्रति प्रीतिपरायणता ।

प्रार्थना पर माँग या इच्छा का पत्थर बाँध देने से वह भगवान तक सहजता से पहुँचती नहीं है । इसलिए भगवान जो करें वही ठीक है ऐसा मानो। प्रार्थना साधक के अहोभाव की दशा है, अंतर की आवाज है, हृदय से निकला हुआ आर्त्तनाद और कृतज्ञता के भाव प्रकट करनेवाले शब्द हैं, जो भगवान तक पहुँचते हैं।''

विश्व भर में भगवन्नाम एवं वैदिक मंत्रों द्वारा जन-जन के मन में भगवद्भक्ति एवं भगवत्प्रीति की ज्योति जगानेवाले, भारतीय संस्कृति के संरक्षक एवं सच्चे हितैषी पूज्य बापूजी ने घोर कलियुग में भी सहज में परमात्मप्राप्ति करने हेतु भगवान का सच्चा पता बताते हुए कहा : ''जिस प्रकार राजनेताओं का वास दिल्ली या गाँधीनगर में होता है, उसी प्रकार जहाँ सच्चे संतों के सान्निध्य में श्रद्धालु भक्त सत्संग और कीर्तन करते हैं, वहाँ अवश्य ही भगवान का वास होता है । यही भगवान का सच्चा पता है ।''

आज की भाग-दौड़ भरी दुनिया में तमाम पापों-तापों तथा तनावों से मुक्त होकर भगवान की भक्ति में सफलता प्राप्त करानेवाले पाँच सोपान भी पूज्य बापूजी ने बताये। २ नवम्बर के सत्संग की 'वी.सी.डी. व ऑडियो कैसेट देखने-सुनने से व्यक्ति तनावमुक्त होकर मानसिक शांति की अनुभूति कर सकता है ।

संत और समाज के बीच सेवा के माध्यम से सेतु बननेवाले भाग्यशाली भक्तों को शुभाशीष देते हुए पूज्य बापूजी ने कहा :

''जो सदा दूसरों के कल्याण और परोपकार में रचे-पचे रहते हैं, उनके सभी कार्य प्रकृति और भगवान सहज ही पूर्ण कर देते हैं । जो दूसरों को शोषित करके, दुःखी करके, कपट-दगा और बेईमानी से अपना स्वार्थ साधकर सुखी होने का प्रयास करते हैं, वे सदा अशांत, दुःखी और तनावग्रस्त रहते हैं । इसलिए समाजरूपी भगवान की सेवा करो । सबमें भगवान के दर्शन कर सभीके कल्याण में अपनी शक्ति, धन-सम्पदा, पद-प्रतिष्ठा का उपयोग करो तो भगवान सदा प्रसन्न रहेंगे।''

सत्संग की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए पूज्यश्री ने बताया : ''सत्संग सुनना-सुनाना यह बहुत ऊँची बात है। काम-धंधे में फायदा-नुकसान हो सकता है पर सत्संग में फायदा-ही-फायदा है, नुकसान की गुंजाइश ही नहीं है ।''

पूज्य बापूजी के आगामी सत्संग कार्यक्रम

(१) नोयडा (उ.प्र.) में 1 से 3 दिसम्बर, पूर्णिमा दर्शन : 3 दिसम्बर, सेक्टर-32, सिटी सेन्टर, राजकीय डिग्री कॉलेज के सामने। संपर्क: 9899071591, 9818479848.

(२) अमदावाद आश्रम में पूर्णिमा दर्शन 4 दिसम्बर (सुबह 11 बजे के बाद)। संपर्क : (079) 27505010-11.

अखबारों के झरोखे से

पूज्य आसारामजी के सत्संग-शिविर में ७० हजार भक्तों ने मंत्रदीक्षा ली

अंतिम दिन १० लाख से अधिक श्रद्धालु उमड़ पड़े

संदेश **बड़ौदा, ६ नवम्बर :** संत श्री आसारामजी बापू के पावन सान्निध्य में बड़ौदा नगरी पिछले चार दिनों से हरिॐ नाम व सत्संग ज्ञान-गंगा में पावन हो रही थी । नवलखी मैदान में लगाये गये विशाल सत्संग मंडप में अंतिम दिन १० लाख से अधिक श्रद्धालु उमड़ पड़े थे ।

आज देवदिवाली, पूनम व रविवार की जाहिर छुट्टी का दिन होने से श्रद्धालु भक्तों की भीड़ बहुत ही बढ़ गयी थी । प्रति मास आनेवाली पूनम के दिन पूज्य बापूजी भारत में जहाँ भी हों वहाँ जाकर उनके दर्शन करने के बाद ही अन्न-जल लेनेवाले ७० हजार से अधिक पूनम व्रतधारियों ने भी सुबह ११ बजे पूज्य बापूजी के दर्शन किये थे ।

पूज्य बापूजी ने बताया : ''संसार में विश्रांति के समान कोई सुख नहीं है । विश्रांति में दुःख, अशांति, तनाव व पाप-ताप दूर करने की शक्ति है ।''

युवानों व विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए पूज्य बापूजी ने बताया : ''भारतीय संस्कृति दिव्य व दैवी संस्कारों से संपन्न है । भारतीय संस्कृति ने मानवमात्र के सर्वांगी कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है । आज विश्व भर में दुःख, अशांति, दरिद्रता, पाप-ताप, तनाव, झगड़े, आतंक दिखायी दे रहे हैं, उसके पीछे मनुष्य की बुद्धि की भ्रष्टता कारण है ।''

आज सुबह ६.३० से ९.३० बजे के सत्र के दौरान ७० हजार से अधिक श्रद्धालुओं को वैदिक विधि से मंत्रदीक्षा व २५ हजार से अधिक विद्यार्थियों को सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा देने के बाद पूज्य बापूजी ने बताया : ''मंत्रदीक्षा यह कोई सामान्य क्रिया नहीं है । ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु द्वारा दिया गया मंत्र चेतन होता है ।''

भारतीय संस्कृति के दिव्य संस्कारों को अपनाने का पूज्य बापूजी का उपदेश

दैनिक भास्कर **बड़ौदा, ६ नवम्बर :** ब्रह्मनिष्ठ संत श्री आसारामजी बापू के पावन सान्निध्य में नवलखी कम्पाउण्ड मैदान में पिछले चार दिन से चल रही कथा आज लाखों श्रद्धालुओं की उपस्थिति में संपन्न हुई। पूज्य आसारामजी बापू ने पाश्चात्य संस्कृति के अंधे अनुकरण से बचकर भारतीय संस्कृति के दिव्य संस्कारों को अपनाने की सीख विद्यार्थियों को दी।

संस्कारी नगरी गत चार दिन से हरिॐ नाम व सत्संग ज्ञान गंगा में पावन हो रही है और अंतिम दिन विशाल सत्संग मंडप में असंख्य श्रद्धालुओं के उमड़ पड़ने से मानो मानव महासागर हिलोरे ले रहा हो, ऐसे दृश्य सर्जित हुए थे ।

आज विशेषतः देवदिवाली, पूनम और रविवार का योग हुआ था । प्रति माह आनेवाली पूनम को पूज्य आसारामजी बापू के दर्शन करके ही अन्न-जल लेनेवाले ७० हजार भक्तजनों ने आज सुबह उनके दर्शन करके धन्यता का अनुभव किया ।

युवानों व विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए पूज्य बापूजी ने

कहा कि भारतीय संस्कृति दिव्य और दैवी संस्कारों से संपन्न है । भारतीय संस्कृति ने मानवमात्र के सर्वांगी कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है । आज विश्व भर में दुःख, अशांति, दरिद्रता, पाप-ताप, झगड़े, आतंक दिखता है क्योंकि उसके पीछे मनुष्य की बुद्धि की भ्रष्टता है । आज के विद्यार्थियों को 'भारत का भविष्य व आनेवाला कल समृद्ध है' - ऐसा संदेश देते हुए उन्होंने बताया कि विद्यार्थी फास्टफूड से बचें, माता-पिता या अभिभावकों का अपमान न करें तथा जल्दी सुखी होने के पागलपन, लालसा से बचकर न करने जैसे काम न करें व अपने जीवन में उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति एवं पराक्रम जैसे सद्गुण अपनायें।

ज्ञान के सागर पूज्य बापूजी ने बताया कि भारतीय संस्कृति के संस्कारों की नींव अत्यधिक गहरी है और उसके प्रभाव से भारतवासी जहाँ भी हों वहाँ आगे आ रहे हैं । वे किसीकी मेहरबानी से आगे नहीं आते और इसीसे ही भारतीयों के जीवन में भगवान के नाम व सत्संग की अनोखी महिमा है।'' आज सुबह पूज्य बापू ने ७० हजार से अधिक श्रद्धालुओं को वैदिक विधि से मंत्रदीक्षा व २५ हजार से अधिक विद्यार्थियों को सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा दी।

आज अंतिम दिन महाआरती के साथ विदाई और समापन समारोह आयोजित हुआ, जिसमें लाखों श्रद्धालुओं ने अपनी श्रद्धाभक्ति के अश्रु बहाकर अलख के औलिया जैसे गीतामर्मज्ञ सद्गुरुदेव को भावभीनी विदाई दी।

पूज्य बापूजी ने स्वास्थ्यकारक यौगिक व आयुर्वैदिक उपचार बताये

पूज्य आसारामजी बापू ने मानव शरीर को स्वस्थ रखने के यौगिक व आयुर्वैदिक उपचार बताते हुए कहा कि बड़ौदा व उसके आस-पास के विस्तारों में रहनेवाले लोगों में गर्मी व पित्त संबंधी रोग होते हैं । साथ ही मुँह में छाले पड़ जाना, पित्त और वायु के दबाव से हृदय संबंधी रोग भी होते हैं । इसलिए वे गुलकंद व मक्खन-मिश्री खायें । शीत ऋतु में सौभाग्य शुंठी पाक का सेवन करना चाहिए ।

केस की फाइल ईशान कोण में रखकर हनुमानजी का स्मरण करें

किसीका कोर्ट-कचहरी का केस चल रहा हो तो उसकी फाइल ईशान कोण में रखकर प्रतिदिन हनुमानजी का स्मरण करना चाहिए । **'पवन तनय बल पवन समाना, बुधि बिवेक बिज्ञान निधाना'** मंत्र का नित्य जप करने से उसमें सफलता मिलती है ।

पूज्य आसारामजी बापू ने साधकों को गर्भपात न कराने की सीख देते हुए बताया कि गर्भपात महापाप है ।

पूज्य बापूजी ने बताया कि हर द्वादशी व रविवार को बिल्व वृक्ष की परिक्रमा करके पूजा करने से ब्रह्महत्या जैसे पाप मिट जाते हैं ।
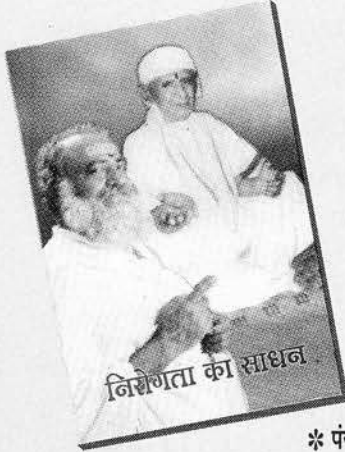
1 December 2006
RNP.NO. GAMC 1132/2006-08
Licenced to Post without Pre-Payment
LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO.48873/91.
DL (C)-01/1130/2006-08.
WPP LIC NO. U (C)-232/2006-08.
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. NW-9/2006

Posting at Rishi Prasad PSO between 1st to 14th of E.M. Back issue at PSO-AHD * Posting at ND.PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.